शासन प्रणाली एवं विकास पर नागरिकों की रिपोर्ट

2013

समीक्षा

नेशनल सोशल वाच

नेशनल सोशल वाच (NSW) सलाहकार एवं शोध टीम

सलाहकार समूह

जगद्नन्दा

अभिताभ कुंडु

पामेला फिलीपोज

संपादक

अमिताभ बहर

योगेश कुमार

जॉन सैमुअल

लेखक

समीक्षाः भास्कर राव गोरंटला एवं देविंदर कौर

संसदः अजय कु0 मेहरा

इनपुटः भास्कर राव गोरंटला

कार्यपालिकाः त्रिलोक सिंह पपोला, भास्कर राव गोरंटला, सुब्रत दास, अंजेला तनेजा, मो0 कमरान, बिराज स्वेन, पूजा रवि, भावना ठाकुर, ऋचा सिंह

न्यायपालिकाः विदेह उपाध्याय एवं भास्कर राव गोरंटला

स्थानीय स्व शासनः भास्कर राव गोरंटला

इनपुट एवं भागीदारीः राजेश झा, रमित बासु एवं संतोष कुमार सिंह

जेयूएनएनआरएम केस स्टडीः श्याम सिंह

शोध एवं रिपोर्ट समन्वयन टीम

भास्कर राव गोरंटला

संतोष कुमार सिंह

अजय कुमार रंजन

फरहा इमान

हिमांशु झा

प्रशासनिक सहयोग

शुभ्रो राय

भैरव दत्त

हम फोर्ड फाउंडेशन एवं ऑक्सफैम इंडिया का उनके उदारतापूर्ण कार्यों एवं परियोजना हेतु वित्तीय सहयोग के लिए आभार प्रकट करते हैं।

शासन प्रणाली एवं विकास पर नागरिकों की रिपोर्ट

2013

नेशनल सोशल वाच

दानिश बुक्स

दिल्ली पटना नागपुर

कापीराइट © नेशनल सोशल वाच (NSW), नई दिल्ली, 2013
आर–10, ग्रीन पार्क एक्सटेंशन
नई दिल्ली– 110 016
फोनः +91 11 4164 4576
www.socialwatchindia.net

सर्वाधिकार सुरक्षित है। इस पुस्तक के किसी भी अंश का प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप या किसी भी साधन (इलेक्ट्रानिक या यांत्रिक जिसमें फोटोकापी भी शामिल है) या किसी भी सूचना या सुधार प्रणाली द्वारा पुनः उत्पादन या प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

प्रथम संस्करणः 2014

प्रकाशकः
दानिश बुक्स
25 बी, स्काईलार्क अपार्टमेंट्स
गाजीपुर, दिल्ली– 110 096
फोनः 011–4306 7412, 2224 0260, 2223 5819; सेलः +91 9868543637
www.daanishbooks.com
ई–मेलः daanishbooks@gmail.com

पटनाः
'जयशांति', 123, कौटिल्य नगर
पटना– 800 014, बिहार
सेलः +91 9097598361, 9576185468
नागपुरः
34ए, काशी नगर, पोस्ट– पार्वती नगर
नागपुर – 440 027, महाराष्ट्र
सेलः +91 8180066517

ISBN 978–93–81144–35–0 (Pb)
संपादकीय सहयोगः देविंदर कौर एवं ध्रुव नारायण
उत्पादन सहयोगः अखिलेश चौधरी
कवर डिजाइनः सौम्य पार्कर

दानिश बुक्स हेतु ध्रुव नारायण द्वारा प्रकाशित
प्रिंट–वेज, दिल्ली, फोनः 64587676 से मुद्रित

विषय–सूची

भूमिका

समीक्षा

परिचय

भारतीय संसद एवं देश के लिए लागत

वर्ष 2010–2012 के दौरान संसद में तथा उसके आसपास विकास

देश के लिए लागत (CTC)

हमारे सांसद कितने उपयोगी हैं?

संसदीय समितियाँ

प्रतिनिधित्ववादी संदर्भ

हित का विरोध

कार्यपालिकाः अयोग्य नीतियाँ, अपर्याप्त संसाधन एवं प्रभावहीन कार्यान्वयन

UPA-II का बजट

सामाजिक क्षेत्र के खर्च में स्थिरता

सिकुड़ती हई राजकोषीय नीति का प्रसार

सीमित कर राजस्व का जुटाव

कृषि

निराशाजनक परिदृश्य

सरकार द्वारा उत्पन्न आपदा

अगला कदम

भारत में रोजगार

रोजगार ढाँचा और विचारधारा

रोजगार की गुणवत्ता

बेरोजगारी

अगला कदम

शिक्षा का अधिकार

उपलब्धता

सुलभता

स्वीकार्यता

अनुकूलन क्षमता

जवाबदेही

नीति एवं बजट आवंटन में बदलाव

खाद्य सुरक्षा

सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP)

सार्वजनिक निजी भागीदारी एवं सार्वजनिक जवाबदेही

सार्वजनिक निजी भागीदारी एवं निष्पक्षता

न्यायपालिकाः निष्पादन, सुधार एवं जवाबदेही

मुख्य मामलों द्वारा न्यायिक प्रदर्शन का मानचित्रण

चुनाव सुधार

सरकारी प्रयोजन/ प्रबंध

बड़ी परियोजनाएँ, पर्यावरण तथा विकास संबंधी मामले

पंचायतें और ग्रामीण क्षेत्रों में उभरते हुए कानूनी मामले

मानवाधिकार की रक्षा

न्यायपालिका के सामने प्रस्तुत मामले और चुनौतियाँ

उच्चतम न्यायालय का बदलता चरित्र

स्थगित एवं विचाराधीन

न्यायालयों में रिक्तियाँ

विचाराधीन एवं दोषसिद्धि की दर

भ्रष्टाचार

आश्चर्यजनक कार्यप्रणालियाँ और फैसले

अनुचित हस्तक्षेप

लगातार स्थगन

अगला कदम

स्थानीय स्वशासनः लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण और समावेशन

स्थानीय निकायों के संबंध में राज्य सरकारों का प्रदर्शन

चुनाव

महिलाओं के लिए आरक्षण और अन्य उपाय

प्राधिकरण का स्थानांतरण

राज्य वित्त आयोग

जिला/ स्थानीय स्तरीय योजना

पंचायत राज मंत्रालय का प्रदर्शन

केंद्रीय मंत्रालयों/ विभागों के साथ इंटरफेस

संयुक्त निधियों का स्थानांतरण

राज्य सरकारों को प्रोत्साहन

पंचायत सशक्तीकरण एवं जवाबदेही प्रोत्साहन योजना

क्षमता निर्माण

स्थानीय शासी निकायों की मुख्य उपलब्धियाँ

मामले और चुनौतियाँ

केंद्र सरकार स्तर पर मामले और चुनौतियाँ

राज्य स्तर पर मामले और चुनौतियाँ

स्थानीय शासी निकाय स्तर पर मामले और चुनौतियाँ

अगला कदम

जेएनएनयूआरएम

अगला कदम

NSW गठबंधन सहयोगी

योगदानकर्ताओं के बारे में

आदित्य रे, सेंटर फॉर डेमोक्रेसी एंड सोशल ऐक्शन, नई दिल्ली।

अजय कु0 मेहरा, निदेशक, सेंटर फॉर पब्लिक अफेयर्स, नई दिल्ली।

अमिताभ बेहर, कार्यकारी निदेशक, नेशनल फाउंडेशन ऑफ इंडिया, नई दिल्ली।

अंजेला तनेजा, कार्यक्रम समन्वयक शिक्षा, आक्सफैम इंडिया, नई दिल्ली।

भास्कर राव गोरंटला, शोध निदेशक, नेशनल सोशल वाच, नई दिल्ली।

भावना ठाकुर, सेंटर फॉर डेमोक्रेसी एंड सोशल ऐक्शन, नई दिल्ली।

बिराज स्वैन, आक्सफैम इंडिया अभियान प्रबंधक, नई दिल्ली।

देविंदर कौर, सामाजिक कार्यकर्ता और भूतपूर्व अवर सचिव, विदेश कार्य मंत्रालय, नई दिल्ली।

मोहम्मद कमरान, शोध विद्यार्थी, सामाजिक औषधि एवं सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र, जेएनयू, नई दिल्ली।

पूजा रवि, सेंटर फॉर डेमोक्रेसी एंड सोशल ऐक्शन, नई दिल्ली।

राजेश कु0 झा, सीनियर लेक्चरर, राजनीति शास्त्र विभाग, राजधानी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली।

ऋचा सिंह, कार्यकारी निदेशक, सेंटर फॉर डेमोक्रेसी एंड सोशल ऐक्शन, नई दिल्ली।

संतोष कुमार सिंह, शोध अधिकारी, नेशनल सोशल वाच, नई दिल्ली।

श्याम सिंह, सहायक प्रोफेसर, सामाजिक विज्ञान, ग्रामीण प्रबंधन संस्थान, आनंद, गुजरात।

सुब्रत दास, कार्यकारी निदेशक, सेंटर फॉर बजट एंड गवर्नेंस एकाउंटेबिलिटी (CBGA), नई दिल्ली।

त्रिलोक सिंह पपोला, भूतपूर्व निदेशक एवं अतिथि प्राध्यापक, औद्योगिक विकास अध्ययन संस्थान, नई दिल्ली; और सदस्य, 'सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम' पर प्रधानमंत्री की परिषद।

विदेह उपाध्याय, उच्चतम न्यायालय के वकील, द इंडियन एक्सप्रेस में प्रमुख स्तंभकार।

योगेश कुमार, कार्यकारी निदेशक, समर्थनः विकास सहयोग केंद्र, भोपाल।

भूमिका

भारत में 100 से ज्यादा पंजीकृत और 1500 मान्यतारहित राजनीतिक दल, 75 करोड़ निर्वाचन क्षेत्र तथा करीब 32 लाख निर्वाचित प्रतिनिधि हैं जिससे यह विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के रूप में उभरा है। भारत में लगातार बिना चूके विशाल चुनाव आयोजित किया जाता है जो पूरे विश्व में जीवंत और प्रभावी व्यवस्था का एक नमूना प्रकट करता है। निष्पक्ष और स्वतंत्र चुनाव के आयोजन में भारतीय विशेषज्ञता और अनुभवों का कई देशों द्वारा व्यापक रूप से अनुसरण किया गया है। वृहद् स्तर पर पिछले दशक से अर्थव्यवस्था अच्छी रही है और वैश्विक मंदी के दौरान अच्छा लचीलापन दर्शाया है।

लेकिन हम अभी भी अपनी शासन प्रणाली तथा विकास में कई मामलों और चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। शासन प्रक्रियाओं में लोगों की भागीदारी तथा शासन प्रणाली की शीर्ष संस्थाओं के संबंध में लोकतंत्र की गुणवत्ता में महत्वपूर्ण और लगातार सुधार की आवश्यकता है। हम अभी भी बहुत बड़े स्तर पर अभाव और दोषपूर्णता से ग्रसित हैं। हमें अपनी शासन प्रणाली और विकास माडलों में बदलाव की जरूरत है। NSW के प्रमुख प्रकाशन 'शासन प्रणाली एवं विकास पर नागरिकों की रिपोर्ट' में प्रत्येक वर्ष शासन प्रणाली तथा विकास में बदलाव के लिए कई निरीक्षणों का प्रकाशन किया जाता है।

यह खुशी की बात है कि सामान्य लोग, विशेष रूप से युवा शासन प्रणाली तथा विकास के मामलों में सक्रिय रुचि लेने लगे हैं। यह हमारे लोकतंत्र के लिए अच्छी बात है। भारतीय राजनीतिक परिदृश्य के लिए अनोखी पुस्तक 'शासन प्रणाली एवं विकास पर नागरिकों की रिपोर्ट' को व्यक्तिगत नागरिकों के लिए शासी संस्थानों को ज्यादा जवाबदेह बनाने हेतु श्रेष्ठ साधन में विकसित किया गया है। इस रिपोर्ट में प्रचुर जानकारी तथा विस्तृत विश्लेषण प्रदान किया जाता है जो नागरिकों को ठीक प्रकार के प्रश्न उठाने तथा अधिकारियों से इसके सही उत्तर और समाधान माँगने के लिए उपयोगी पैठ प्रदान करता है।

शासन प्रणाली की चार शीर्ष संस्थानों अर्थात विधानमंडल, कार्यपालिका, न्यायपालिका और स्थानीय शासी निकायों को कवर करते हुए इस रिपोर्ट में देश में शासन प्रणाली और विकास के प्रत्येक पहलू को कवर किया गया है। प्रत्येक वर्ष इस रिपोर्ट में व्यापक चर्चा तथा सुधारात्मक कार्यवाही के लिए शासन प्रणाली और विकास से संबंधित मामलों तथा चुनौतियों को प्रकाश में लाया जाता है। नीचे इस रिपोर्ट की झलक प्रस्तुत की जा रही है–

- भारत में संसद एक ऐसी संस्था के रूप में उभरी है जो राजनीतिक प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहन देती है जिसने उपेक्षित वर्ग को राजनीतिक अधिकार का हिस्सा प्राप्त करने के लिए वर्षों से रास्ता बनाया है। अभी भी इसकी दक्षता, प्रभाविता और योग्यता के साथ हंगामे की संसदीय संस्कृति के विकसित होने के कारण कुछ हद तक समझौता किया जाता है, जिसे विपक्षी दलों द्वारा सरकार का ध्यान आकर्षित करने का एकमात्र उपाय माना जाता है। दोनों सदनों के अंदर सड़क की राजनीति के बढ़ते प्रयोग से इसकी दक्षता पर प्रभाव पड़ा है क्योंकि महत्वपूर्ण विधेयक वर्षों से लंबित पड़े हैं या उन्हें बिना पर्याप्त विचार–विमर्श के पारित कर दिया गया है। इस कार्य संस्कृति से संस्थानों की प्रभाविता और बदलाव की संस्था के रूप में इनकी योग्यता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है जो सरकार को अपनी उँगलियों पर नचाता है। स्पष्ट रूप से यह एक कमजोर संसदीय संगठन को सूचित करता है जिसमें नेतृत्व नकारात्मक रणनीति अपनाता है।

- हमारे सांसद कम से कम तीन मानदंडों– परिसंपत्ति वर्ग, लिंग और आपराधिक रिकार्डों पर हमारे लोगों का सही रूप में प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। भारतीय विधानमंडल में करोड़पतियों की संख्या बहुत ही तेजी से बढ़ रही है। 15वीं लोकसभा में लगभग 58 प्रतिशत सदस्य करोड़पति हैं लेकिन हमारी तीन–चौथाई से भी ज्यादा जनसंख्या गरीब और कमजोर है। क्या इन करोड़पतियों को यह मानते हुए कि केवल गरीब ही गरीब के दुख और आवश्यकताओं को समझ सकता है, अपने निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने का इरादा और क्षमता है? इसी तर्क पर महिलाओं की आकांक्षाओं और आवश्यकताओं को भी हमारे विधानमंडलों में पर्याप्त रूप से प्रदर्शित नहीं किया जाता है। वर्ष 1952 से लेकर अब तक लोकसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व केवल 6 प्रतिशत है। राज्य सभा में इनका केवल 9 प्रतिशत प्रतिनिधित्व है।
- कार्यपालिका उचित नीतियाँ बनाने, पर्याप्त संसाधन जुटाने और प्रभावी रूप से संसाधनों का प्रयोग करने में अच्छा प्रदर्शन नहीं कर रही है। प्रचलित धारणा यह है कि 'हमारे पास अच्छी नीतियाँ हैं, लेकिन उनका कार्यान्वयन ठीक ढंग से नहीं होता है।' प्रायः फोकस केवल कार्यान्वयन पर होता है। लेकिन हमें याद रखना चाहिए कि आसान कार्यान्वयन किसी भी अच्छी नीति की विशेषता होनी चाहिए। कृषि और रोजगार क्षेत्र का दीर्घकालीन विश्लेषण अनुचित नीतियों की समस्या को उजागर करता है।
- रोजगार क्षेत्र में सुझाव दिया गया कि हमारे अधिक जनसंख्या वाले देश में वर्ष 1950 में रोजगार सृजन को बड़ा मामला नहीं समझा जाता था। और तब से लेकर अब तक विकास/ औद्योगीकरण की प्रक्रिया में रोजगार सृजन पर कभी भी पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। इसके परिणामस्वरूप केवल 16.6 प्रतिशत कर्मचारियों को नियमित रोजगार प्राप्त है। अन्य लोगों को बिना किसी नौकरी या सामाजिक सुरक्षा के स्वरोजगार (50.6 प्रतिशत) और अल्पकालिक रोजगार (33 प्रतिशत) करना पड़ता है। श्रमिकों का पाँचवाँ हिस्सा जिनको पूर्ण रोजगार प्राप्त है लेकिन वे गरीबी रेखा से ऊपर नहीं हो पा रहे हैं।
- वर्ष 2013 के अंत में उच्चतम न्यायालय द्वारा कई पहलुओं पर कई निर्णय लिए गए जैसे बैलेट पेपर/ इलेक्ट्रानिक वोटिंग मशीन (EVM) में 'उपरोक्त में से कोई नहीं' (NOTA) विकल्प, अपराधी निर्वाचित प्रतिनिधि की तत्काल अयोग्यता, सजा प्राप्त व्यक्ति को चुनाव लड़ने से रोकना और मुख्य सूचना आयोग का आदेश कि "राजनीतिक दल 'सार्वजनिक प्राधिकार' की सुविधाओं के अंतर्गत आते हैं" जिन्हें सूचना का अधिकार, 2005 के अंतर्गत सूचना प्रदान करने की आवश्यकता होती है। इन आदेशों को कई लोगों द्वारा चुनावी सुधारों की नई लहर के रूप में देखा गया। यद्यपि इन निर्णयों के प्रति राजनीति प्रतिक्रियाओं द्वारा आशा धूमिल हुई है। जहाँ पर निर्णय राजनीतिज्ञों को सीधे प्रभावित कर रहा था वहाँ पर उन्होंने इसके प्रति न्यायिक रीति से और वैधानिक रूप से और तत्परतापूर्वक प्रतिक्रिया दी।
- उच्चतम न्यायालय अधिकांश रूप से सामान्य रूप से विशेष अनुमति याचिकाओं (SLPs) को निपटाते हुए अपील की जनरल कोर्ट की विशेषता

को अपना रहा है जिसमें महत्वपूर्ण संवैधानिक और मौलिक कानूनी मुद्दे शामिल नहीं हैं। आज तक उच्चतम न्यायालय में लंबित केसों का 50 प्रतिशत SLPs हैं।

- केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं (CSSs) को पुनः डिजाइन करने में चूक के अलावा भारत सरकार (GoI) वित्त आयोग के माध्यम से स्थानीय शासी निकायों (LGBs) के लिए आवश्यक निधियों को स्थानांतरित करने में भी असफल रही। इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (SARC) की महत्वपूर्ण सिफारिशों को रद्द कर दिया जो स्थानीय शासी निकायों को मजबूत करने तथा नौकरशाही से निर्वाचित प्रतिनिधियों की तरफ अधिकार संतुलन के झुकाव के लिए है।
- उदार आरक्षण के कारण विभिन्न वर्गों और पृष्ठभूमि की महिलाएँ अपनी क्षमताएँ जानने लगी हैं और अपने गाँवों, संस्थाओं तथा समुदायों के हित के लिए ज्यादा योगदान देने लगी हैं। महिला निर्वाचित प्रतिनिधियों (WERs) का बेहतर प्रदर्शन महिला आरक्षण विधेयक के पारित होने का एक मुख्य कारण है जो संसद में लगभग दो दशकों से विचाराधीन था। महिला प्रतिनिधियों के अच्छे प्रदर्शन का उनके शैक्षिक स्तर के बीच सकारात्मक पारस्परिक संबंध देश में ज्यादा आवश्यक राजनीतिक सुधारों के लिए एक उपयोगी निरीक्षण हो सकता है।

प्रचुर जानकारी और संपूर्ण विश्लेषण के साथ यह रिपोर्ट आशापूर्वक हमारी सभी शासी संस्थाओं व्यापक सुधार की शुरूआत करने में योगदान देगी जिसमें राजनीतिक दल भी शामिल हैं।

यह साझा करते हुए हमें खुशी हो रही है कि पिछले वर्ष NSW बुलेटिन के कार्यक्षेत्र और बारंबरता में बढ़ोत्तरी हुई है। बुलेटिन द्वारा हम शासन प्रणाली तथा विकास के मामलों से संबंधित समाचारों तथा विश्लेषण के साथ लगातार केवल अपने नेटवर्क सदस्यों और अन्य हितधारकों तक ही नहीं पहुँच रहे हैं बल्कि मामलों की एक सूची बनाने में भी समर्थ हुए हैं, जिसे नागरिकों की रिपोर्ट और अन्य शोध तथा सिफारिश कार्यों में कवर किया जा सकता है।

राज्य सोशल वाच गठबंधन गतिविधियों में उछाल देखकर खुशी होती है। पिछले डेढ़ वर्षों के दौरान पाँच राज्यों ने अपनी सोशल वाच रिपोर्टो को प्रकाशित किया है। इन पाँचों में से तीन रिपोर्टों को तो दो महीनों में ही प्रकाशित किया गया।

हम रिपोर्ट के उन कई योगदानकर्ताओं को अपना आभार प्रकट करना चाहेंगे जो विभिन्न दृष्टिकोण तथा निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं जो इस प्रक्रिया के आधार को केवल विस्तृत ही नहीं किया है बल्कि इस रिपोर्ट को विषय–वस्तु और कवरेज के संबंध में संपूर्ण और प्रचुर बनाया है। इन योगदानकर्ताओं के नाम इस रिपोर्ट के प्रथम पृष्ठ पर दिए गए हैं। नेशनल सोशल वाच के सलाहकार सदस्यों को धन्यवाद देते हैं और अपना आभार व्यक्त करते हैं जिन्होंने इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए लगातार अपना मार्गदर्शन और सहयोग प्रदान किया है तथा अपना मूल्यवान फीडबैक दिया है। खास करके सोशल वाच गठबंधन सहयोगियों को उनके सहयोग तथा प्रोत्साहन की हम बहुत सराहना करते हैं जिनके बिना यह प्रक्रिया सफल नहीं हो सकती थी।

नई दिल्ली

दिसंबर

अमिताभ बेहर

नेशनल सोशल वाच

समीक्षा

परिचय

यह खुशी की बात है कि सामान्य लोग विशेष रूप से युवा शासन प्रणाली तथा विकास के मामलों में सक्रिय रुचि ले रहे हैं। हाल के चुनावों में मतों के प्रतिशत में वृद्धि और कई आंदोलनों में बहुत बड़ी संख्या में लोगों की स्वाभाविक भागीदारी, सामाजिक मीडिया में कई मामलों पर बहुत बड़ी संख्या में सक्रिय पोस्टिंग, बहुत बड़ी संख्या में जनहित याचिकाएँ (PILs) आदि शासन प्रणाली तथा विकास के मामलों में सामान्य लोगों की बढ़ती हुई रुचि के सूचक हैं। यह हमारे लोकतंत्र के लिए अच्छी बात है। शासन प्रणाली एवं विकास पर नागरिकों की रिपोर्ट को व्यक्तिगत नागरिकों के लिए शासी संस्थानों को ज्यादा जवाबदेह बनाने हेतु श्रेष्ठ साधन में विकसित किया गया है। इस रिपोर्ट में प्रचुर जानकारी तथा विस्तृत विश्लेषण प्रदान किया जाता है जो नागरिकों को ठीक प्रकार के प्रश्न उठाने तथा अधिकारियों से इसके सही उत्तर और समाधान माँगने के लिए उपयोगी पैठ प्रदान करता है।

शासन प्रणाली की चार शीर्ष संस्थानों अर्थात विधानमंडल, कार्यपालिका, न्यायपालिका और स्थानीय शासी निकायों को कवर करते हुए इस रिपोर्ट में देश में शासन प्रणाली और विकास के प्रत्येक पहलू को कवर किया गया है। प्रत्येक वर्ष इस रिपोर्ट में व्यापक चर्चा तथा सुधारात्मक कार्यवाही के लिए शासन प्रणाली और विकास से संबंधित मामलों तथा चुनौतियों को प्रकाश में लाया जाता है।

भारतीय संसद और देश के लिए लागत

इस अध्याय में संसदीय प्रदर्शन को आंकने के लिए ढाँचा और मानदंड का संक्षेप में वर्णन किया गया है। छह प्रदर्शन सूचक– वित्त, अनुपालन, कार्यक्षमता, प्रभाविता, योग्यता और धारणीयता प्रतिनिधि संस्थानों को प्रभावशाली बनाते हुए लोकतंत्र को मजबूत बनाने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मंथन की प्रक्रिया से उभरे। सांसदों के लिए अंतर–संसदीय संघ द्वारा विकसित आत्म–मूल्यांकन साधन में भी इसी प्रकार के पैरामीटरों का उल्लेख है। इस अध्याय में आगे यह भी बताया गया है कि संसद के प्रदर्शन का मूल्यांकन करने के लिए भारत में हमें अतिरिक्त मानदंडों पर भी विचार किए जाने की आवश्यकता है, जैसे शासन प्रणाली संदर्भ, संसदीय संस्कृति, संसदीय संगठन, और संसदीय प्रदर्शन।

वर्ष 2010–2012 के दौरान संसद में तथा उसके आसपास विकास

भारत की संसदीय संस्कृति तब से जाँच के दायरे में रही है जब से अप्रैल–मई 1952 में पहली संसद का गठन हुआ था। एक दशक से अधिक समय से भारतीय संसद पर बड़ी बहस दोनों सदनों में शोर–शराबे के कारण काम के घंटों का नुकसान होने पर रही है। दोनों सदनों में विपक्ष को अनुचित कार्य के खिलाफ व्यक्त करने के लिए कोई दूसरा रास्ता नहीं मिला जो राष्ट्र के महत्वपूर्ण और दुर्लभ संसाधनों को नुकसान पहुँचा रहा था बल्कि भारत के प्रतिनिधि लोकतंत्र की आधारशिला की कार्य पद्धति को बाधित करने वाले दूसरे अनुचित कार्य को किया। कई सालों से राज्यों के विधानसभा स्थल साथ ही नई दिल्ली में संसद राजनीतिक लड़ाई के अखाड़े में परिवर्तित हो रही है जहाँ विपक्षी दल शासक दल/गठबंधन और सरकार से राजनीतिक तोहफा प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं। वे विकल्प सुझाते हुए कानून बनाने के लिए पेश किए गए नीति उपायों पर ज्यादा समीक्षा और/ या बहस नहीं करते हैं, वे विधेयक के प्रस्तुतीकरण और पारित करने को बाधित करते हैं। वे भ्रष्टाचार या अन्य किसी प्रशासनिक तथा नीति अनौचित्य से संबंधित निश्चित घटनाओं, मामलों के लिए सरकार की निष्क्रियता या असंवेदनशीलता का विरोध करते हुए कार्यवाहियों को बाधित करते हैं। समाज के

अधिकारहीन वर्गों के अधिकारों के उल्लंघन या लिंगीय हिंसा पर अवरोधों की घटनाएँ हैं। यद्यपि प्रक्रिया में वे विधानसभाओं और संसद की कार्यपद्धति को बाधित करते हैं। इस प्रक्रिया में उनके द्वारा बोध किए गए या वास्तव में प्राप्त हुए फायदों का कोई भी संकेत नहीं है। आश्चर्य की बात है कि राज्यों और केंद्र दोनों में सरकार और शासी दल इस पर ध्यान देती प्रतीत नहीं होती हैं और अनावश्यक रूप से अवरोधों से अधिक परेशान होते नहीं दिखते; शायद यह उनकी मदद करता है। *देश में संसदीय संस्कृति का पूर्ण परिवर्तन होना है जहाँ बहस बहुत ही कम होती है, यदि होती है तो सूचित बहस भी बहुत कम होती है और सरकार तथा विपक्ष राष्ट्र और इसकी जनता के लिए कार्य करने के अबाध क्रम की जवाबदेही के दोनों सिरों पर राजनीतिक साज–सज्जा की अपेक्षा युद्धरत विरोधियों के रूप में मिलते हैं।*

देश के लिए लागत (CTC)

देश के लिए लागत पर विचार करते हुए यह रिपोर्ट भारत में और अन्य देशों में भी विधायकों को भुगतान और अनुलाभों के बारे में मामलों तथा प्रवृत्तियों की संक्षेप में समीक्षा करती है। 20 अगस्त 2010 को मूल वेतन में तिगुनी बढ़ोत्तरी का कई सांसदों द्वारा विरोध किया गया जो इसे कम बढ़ोत्तरी और देश के विधायकों का अपमान मान रहे थे। चुनिंदा नौ देशों में किए गए एक अध्ययन का हवाला देते हुए यह कहा जाता है कि भारतीय सांसदों को दिए जाने वाले भुगतान और अनुलाभों की कुल राशि सिंगापुर, जापान और इटली में उनके समकक्षों की तुलना में ज्यादा है। यह पाकिस्तान से साढ़े चार गुना ज्यादा है; और देश की प्रति व्यक्ति आय की तुलना में लगभग 68 गुना ज्यादा है। यूएसए में यह 35 गुना है।

हमारे सांसद कितने उत्पादक हैं?

भारतीय संसद पर सोशल वाच में प्रकाशित नागरिकों की रिपोर्ट से संबंधित दूसरा प्रश्न संसद और सांसदों की उत्पादकता है। वर्ष 2010–12 के दौरान संसद के नौं सत्रों में 852 घंटों में 227 बैठकों के दौरान प्रतिदिन औसतन चार घंटों से भी कम कार्य हुआ जो निर्धारित छह घंटे प्रतिदिन के दो–तिहाई से भी कम है और इस प्रक्रिया में लगभग 577 घंटे हंगामों तथा मजबूर स्थगन में गँवा दिए गए। गँवाए गए समय को पूरा करने तथा कुछ सूचित या बेहद जरूरी कार्यों को निटाने के लिए अतिरिक्त 170 घंटों की बैठक हुई। 10वें सत्र में यह औसत बढ़कर पाँच घंटे प्रति बैठक हुआ और छठें सत्र में 23 बैठकों में 7.35 घंटे तक कार्य हुआ। इन नौ सत्रों में 4,224 तारांकित प्रश्न और 48,420 अतारांकित प्रश्नों को प्रस्तुत किया गया और उसके उत्तर दिए गए। जबकि कार्यवाहियों के दौरान 139 सरकारी विधेयक प्रस्तुत किए गए और 119 पारित किए गए, संसदीय समितियों की 514 रिपोर्टों को प्रस्तुत किया गया जिसमें विभाग से संबंधित स्थायी समितियाँ (DRSCs) शामिल हैं। राज्य सभा में 228 बैठकों में 744 घंटों तक कार्य हुआ। इसमें निर्धारित पाँच घंटों की अपेक्षा तीन घंटे प्रतिदिन कार्य हुआ और लगभग 442 घंटे हंगामों और जबरन स्थगन में व्यर्थ हुए। इसको पूरा करने के लिए लगभग 138 घंटों की अतिरिक्त बैठक हुई। पूरे सत्र के दौरान 4,164 तारांकित प्रश्न (करीब 10 प्रतिशत का संबंधित मंत्रियों द्वारा मौखिक रूप से उत्तर दिया गया) और 32,742 अतारांकित प्रश्नों को प्रस्तुत किया गया। इन सत्रों में 39 नए विधेयक प्रस्तुत किए गए; सदन ने 114 विधेयकों को पारित या वापस किया। प्रत्येक सत्र में संसदीय समितियों के 1,500 पेपरों तथा 110 से ज्यादा रिपोर्टों/विवरणों को प्रस्तुत किया गया।

क्रमशः तीन वर्षों की समीक्षा के अंतर्गत दोनों सदनों में लंबित विधेयकों का ढेर लग रहा है और इनकी संख्या दुगुनी से भी ज्यादा हो गई है। प्रत्येक सत्र की शुरूआत मूल पिछले शेष कार्यों से होती है; अधिकांश केसों में नए प्रस्तुत किए गए विधेयकों की अपेक्षा लंबित विधेयकों की संख्या ज्यादा होती है। फिर भी कुछ ही विधेयकों को पारित किया जाता है। वास्तव में सरकार नियोजित कई विधेयकों को प्रस्तुत भी नहीं कर पाती है। 15वीं लोकसभा में लंबित विधेयकों (51) में से 25 एक साल से कम के थे और 19 एक से दो वर्षों के बीच के थे। यह नोट किया जाए कि लोकसभा के भंग होने पर सभी लंबित विधेयक रद्द हो जाएँगे।

स्थायी निकाय होते हुए राज्य सभा में प्रस्तुत किए गए विधेयक तब तक लंबित रहते हैं जब तक कि उन्हें पारित/ वापस, हटाया या अस्वीकार नहीं किया जाता है। इसका अर्थ यह है कि सदन में विधेयक लंबे समय तक पड़े रहते हैं। मई 2012 में इसमें 37 लंबित विधेयक थे, जिसमें से 11 दो से लेकर पाँच साल से लंबित थे और 13 पाँच साल से भी ज्यादा समय से लंबित थे। इन 13 विधेयकों में से पाँच विधेयक दस वर्षों से भी ज्यादा समय से लंबित थे और दो विधेयक बीस वर्षों से भी ज्यादा समय से लंबित थे। यह नोट करना और निरीक्षण करना जरूरी है कि क्यों कुछ विधेयक मृतप्राय हो जाते हैं और क्या ऐसा परिस्थितिवश होता है या उनकी डिजाइन के कारण होता है। यह भी विस्तृत अध्ययन का विषय है कि क्या कुछ मृतप्राय विधेयकों को नया रूप दिया जाता है; यदि हाँ तो किस रूप में?

संसद में विधेयकों को पारित करने और बजट के अनुमोदन की प्रक्रिया भी उतनी ही चिंता का विषय है। वर्ष 2011 में पारित 34 विधेयकों में से 5 को पाँच मिनट से भी कम समय में पारित कर दिया गया और अन्य 6 विधेयकों को 30 मिनट के अंदर पारित कर दिया गया। संसद स्पष्ट रूप से बजट को भी पारित करने में गंभीर नहीं है। इसके पास सामान्यतः प्रत्येक मंत्रालय के बजटीय प्रस्तावों (अनुदानों के लिए माँग) पर चर्चा करने के लिए समय नहीं होता है। केवल कुछ ही मंत्रालयों की माँगों पर चर्चा की जाती है। बाकी को गिलोटिन अर्थात बिना चर्चा किए एक साथ वोट करने के लिए रखा जाता है। वर्ष 2012 के बजट सत्र में करीब 92 प्रतिशत गिलोटिन हो गए। इस ढंग से किया गया बजट आवंटन कुल ₹11.8 ट्रिलियन था। वर्ष 2011 में कुल माँगों का 81 प्रतिशत गिलोटिन कर दिया गया और वर्ष 2010 में कुल माँगों के 84 प्रतिशत को गिलोटिन कर दिया गया।

संसदीय समितियाँ

व्यक्तिगत साथ ही संयुक्त रूप से दोनों सदन समितियों में छोटे समूहों में कार्य करते हैं। यह सदस्यों के छोटे समूहों को किसी निश्चित मामले को गहनता से अवलोकन करने तथा कानून बनाने के लिए उपयुक्त सदन को प्रासंगिक सिफारिश करने में सक्षम बनाता है। किसी भी समय पर प्रत्येक सदन में लगभग 50 समितियाँ होती हैं। इन समितियों को व्यापक रूप से चार श्रेणियों में विभाजित किया जाता हैः वित्त समिति; विभाग संबंधी स्थायी समिति (DRSCs); आंतरिक समिति; और विशेष या तदर्थ समिति, जिसमें फोरम भी शामिल है। तीन वित्त समितियाँ होती हैं– प्राक्कलन समिति, सार्वजनिक उपक्रम और लोक लेखा समिति। 24 DRSCs होती हैं जो नीतियों, योजनाओं, बजट और कार्यक्रमों तथा संबंधित मंत्रालयों और विभागों द्वारा कार्यान्वयन की समीक्षा करती हैं। 24 DRSCs में से 16 लोकसभा द्वारा संचालित हैं और 8 राज्य सभा द्वारा संचालित हैं। वर्ष 2010–11 के दौरान 7 समितियों ने बैठक नहीं किया और कुछ समितियों ने अपेक्षाकृत कोई भी अल्पकालीन बैठक नहीं की और वर्ष 2011–12 की शुरूआत के छह महीनों के दौरान चार समितियों ने बैठक नहीं की। औसत बैठक बैठक अवधि लगभग 75 से 80 मिनट थी। यह पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस के लिए 2.30 घंटे और लोक लेखा तथा सामाजिक न्याय एवं सशक्तीकरण के लिए 50 मिनट थी। समिति की बैठकों में सदस्यों की औसत उपस्थिति महत्वपूर्ण समिति जैसे प्राक्कलन के लिए सबसे कम 40 प्रतिशत थी और श्रम के लिए सबसे ज्यादा 69 प्रतिशत थी। कई समितियों में सदस्यता सांसदों को चर्चा, विश्लेषण, जोड़बंदी तथा लेखन में भागीदारी और संलग्नता को प्रभावित करती है। कुछ सदस्य प्रायः सक्रिय भूमिका निभाते हैं और छानबीन, विश्लेषण तथा सिफारिशों एवं रिपोर्टिंग के वास्तविक कार्य को करते हैं। हाल का अनुभव सुझाव देता है कि संसदीय समितियाँ हाल ही में उजागर हुए कई घोटालों और शासी दल का इस संकट से बचने के लिए समिति में अपने सदस्यों का प्रयोग करने के प्रयास के मद्देनजर दलगत राजनीति के लिए युद्धक्षेत्र बन गया है। इन समितियों की संसद का लघु निकाय होने के महत्व को देखते हुए इसकी कार्यपद्धतियों के लिए महत्वपूर्ण इनपुट प्रदान करते

हुए और सरकार को विधानसभा साथ ही लोगों के प्रति जवाबदेह बनाते हुए उन्हें दल के स्तर से उठना और ज्यादा द्विदलीय आचरण में कार्य करना जरूरी है।

प्रतिनिधित्ववादी संदर्भ

इस भाग में यह बताया गया है कि हमारे सांसद कम से कम तीन मानदंडों– परिसंपत्ति वर्ग, लिंग और आपराधिक रिकार्डों पर हमारे लोगों का सही रूप में प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं। भारतीय विधानमंडल में करोड़पतियों की संख्या बहुत ही तेजी से बढ़ रही है। 15वीं लोकसभा में लगभग 58 प्रतिशत सदस्य करोड़पति हैं लेकिन हमारी तीन–चौथाई से भी ज्यादा जनसंख्या गरीब और कमजोर है। क्या इन करोड़पतियों को यह मानते हुए कि केवल गरीब ही गरीब के दुख और आवश्यकताओं को समझ सकता है, अपने निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करने का इरादा और क्षमता है? इसी तर्क पर महिलाओं की आकांक्षाओं और आवश्यकताओं को भी हमारे विधानमंडलों में पर्याप्त रूप से प्रदर्शित नहीं किया जाता है। हमारे विधानसभाओं में महिलाओं का प्रतिनिधित्व कम रहा है। लोकसभा में महिलाओं का प्रतिनिधित्व पहली लोकसभा से लेकर 14वीं लोकसभा तक एकल अंक प्रतिशत रहा है जो 15वीं लोकसभा में 11 प्रतिशत तक पहुँच गया है। वर्ष 1952 से लेकर अब तक लोकसभा में महिलाओं का औसत प्रतिनिधित्व केवल 6 प्रतिशत है। राज्य सभा में इनका केवल 9 प्रतिशत प्रतिनिधित्व है। आपराधिक पृष्ठभूमि के विधायकों की संख्या कई सालों से बढ़ रही है। यह 15वीं लोकसभा में एक चौथाई तक पहुँच गई है। यहाँ तक कि 15वीं लोकसभा में 17 प्रतिशत महिला सदस्यों का आपराधिक रिकार्ड है। लगभग सभी राजनीतिक दलों के पास करोड़पति सदस्य, अपराधीकरण और महिलाओं के प्रतिनिधित्व के संबंध में एक जैसा ट्रैक रिकार्ड है।

हित का विरोध

लोकतंत्र की मुख्य ढाँचागत चुनौती 'हित का विरोध' की संभावना का निराकरण करना है जो निर्वाचित प्रतिनिधि अपने व्यक्तिगत स्वभाव के हितों के साथ अपनी सार्वजनिक क्षमता में सामना करता है। पूरे विश्व में लोकतंत्र इस मामले का कानूनों और संस्थागत जाँचों के साथ सामना करता रहा है।

कार्यपालिकाः अयोग्य नीतियाँ, अपर्याप्त संसाधन एवं प्रभावहीन कार्यान्वयन

कार्यपालिका कई सालों से उपेक्षित वर्गों के लेंस से अधिकार परिप्रेक्ष्य से विविध सरकारी नीतियों, कार्यक्रमों और परियोजनाओं की डिजाइन, कार्यान्वयन तथा प्रभाव की चर्चा करता रही है। प्रायः विश्लेषण वर्तमान या पिछले एक–दो सालों के आँकड़ों/प्रगति के प्रयोग तक ही सीमित है। इस अध्याय में कुछ क्षेत्रों में वार्षिग प्रगति की सामान्य समीक्षा के अलावा पहली बार दो महत्वपूर्ण क्षेत्रों अर्थात रोजगार और कृषि में गहराई से दीर्घकालीन प्रवृत्ति और बड़ी चुनौतियों का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय में कवर किए गए अन्य विषय/क्षेत्र केंद्रीय बजट, शिक्षा का अधिकार (RTE), खाद्य सुरक्षा और सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) हैं।

यूपीए द्वितीय का बजट

यूपीए द्वितीय सरकार ने देश की अर्थव्यवस्था के आकार (सकल घरेलू उत्पाद द्वारा मापा गया) की तुलना में केंद्रीय बजट के कार्यक्षेत्र (बजट से कुल व्यय द्वारा मापा गया) को कम करना जारी रखा। केंद्रीय बजट से कुल व्यय को वर्ष 2012–13 में सकल घरेलू उत्पाद के 14.9 प्रतिशत (बजट आकलन/BE) से वर्ष 2013–14 में घटकर सकल घरेलू उत्पाद का 14.6 प्रतिशत रह गया और इस रुढ़िवादी राजकोषीय नीति की चोट को मुख्य रूप से गरीबों द्वारा ही सहना है।

सामाजिक क्षेत्र के खर्च में स्थिरता

खाद्य सुरक्षा विधेयक के वादे के बावजूद, जिसे वर्ष 2013–14 के दौरान कार्यान्वित होना अपेक्षित था, खाद्य सब्सिडी के लिए केंद्रीय बजट परिव्यय बहुत ही कम बढ़ाया गया है जिसे वर्ष 2012–13 में ₹86,707.5 करोड़ (RE) से वर्ष 2013–14 में

₹91,591.4 करोड़ (BE) कर दिया गया। सर्व शिक्षा अभियान (SSA) के लिए आवंटन वर्ष 2012–13 (RE) में ₹23,645 करोड़ से वर्ष 2013–14 में 27,258 करोड़ (BE) कर दिया गया जिसमें केवल ₹3,613 करोड़ की ही वृद्धि हुई है। स्वास्थ्य के लिए आवंटन वर्ष 2013–14 (BE) में कुल केंद्रीय बजट का 2.25 प्रतिशत ही है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय के लिए केंद्रीय बजट के आवंटन में वर्ष 2012–13 (BE) में ₹18,584 करोड़ से वर्ष 2013–14 (BE) में ₹20,440 करोड़ की छोटी सी वृद्धि दिखाई देती है। महिलाओं को सशक्तीकृत करने और उनकी सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए वर्ष 2013–14 में ₹1,000 करोड़ के आवंटन के साथ 'निर्भया' निधि स्थापित करना केंद्रीय बजट 2013–14 में की गई एक नई पहल है।

सामाजिक क्षेत्र के लिए कुल केंद्रीय बजट परिव्यय वर्ष 2004–05 में सकल घरेलू उत्पाद के 1. 2 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2008–09 में सकल घरेलू उत्पाद का 2 प्रतिशत हो गया। यद्यपि यह आँकड़ा आगे के तीन केंद्रीय बजटों में सकल घरेलू उत्पाद के लगभग 2 प्रतिशत के आसपास ही स्थिर रहा है और वर्ष 2011–12 (BE) में यह घटकर सकल घरेलू उत्पाद का 1.8 प्रतिशत ही रह गया। इस क्षेत्र में देश का कुल बजटीय व्यय वर्ष 2013–14 में भी सकल घरेलू उत्पाद का 7 प्रतिशत से कम रहा, जबकि OECD देशों में सरकारों द्वारा सामाजिक क्षेत्र व्यय के लिए औसत आँकड़ा सकल घरेलू उत्पाद के 14 प्रतिशत तक है।

सिकुड़ती हई राजकोषीय नीति का प्रसार

केंद्रीय बजट के आकार को वर्ष 2012–13 (RE) में सकल घरेलू उत्पाद के 14.3 प्रतिशत से वर्ष 2013–14 (BE) में सकल घरेलू उत्पाद के 14. 6 प्रतिशत तक बहुत ही थोड़ा बढ़ाया गया है। केंद्रीय बजट का संपूर्ण आकार वर्ष 2008–09 और 2010–11 के दौरान सकल घरेलू उत्पाद के लगभग 15.7 प्रतिशत से 15.4 प्रतिशत तक रहा अर्थात यह वह अवधि है जब वैश्वित आर्थिक मंदी थी जिसमें केंद्रीय सरकार ने देश में सार्वजनिक व्यय को बढ़ाने की आवश्यकता को संबोधित करने के प्रयास किए। पिछले दो बजटों में केंद्रीय बजट का संपूर्ण आकार विशेष रूप से वर्ष 2012–13 (RE) के दौरान भारत की अर्थव्यवस्था के आकार की तुलना में सिकुड़ गया है। सरकार राजकोषीय उत्तरदायित्व का अनुसरण करती हुई प्रतीत होती रही है और बजट प्रबंधन (FRBM) अधिनियम ने राजकोषीय समेकन के रास्ते को बताया है।

सीमित कर राजस्व का जुटाव

भारत जैसे देश में सरकार के लिए राजकोषीय नीति प्रसार महत्वपूर्ण रूप से इसके कर राजस्व की संपूर्ण मात्रा पर निर्भर करता है। किसी देश के लिए सकल घरेलू उत्पाद अनुपात को देश की अर्थव्यवस्था के आकार के अनुपात के रूप में एकत्रित संपूर्ण कर राजस्व से मापा जाता है। भारत के कर–सकल घरेलू उत्पाद अनुपात का कम स्तर लंबे समय से चिंता का विषय रहा है। आर्थिक मंदी से पहले केंद्र का सकल कर राजस्व वर्ष 2007–08 में सकल घरेलू उत्पाद के 12 प्रतिशत तक पहुँच गया था; आर्थिक मंदी के प्रभाव के अंतर्गत वर्ष 2008–09 में यह गिरकर सकल घरेलू उत्पाद का 10.9 प्रतिशत रह गया और आगे वर्ष 2009–10 में यह सकल घरेलू उत्पाद के 9.5 प्रतिशत तक गिर गया। यद्यपि कर में दी जाने वाली छूट को हटाने के बाद भी वर्ष 2012–13 (RE) में सकल घरेलू उत्पाद के 10.4 प्रतिशत और वर्ष 2013–14 (BE) में सकल घरेलू उत्पाद के 10.9 प्रतिशत के साथ बहुत ही कम बढ़ोत्तरी देखी गई। भारत में कुल कर राजस्व की मात्रा (देश की अर्थव्यवस्था के आकार की तुलना में) कई अन्य देशों में एकत्र किए गए कर राजस्व की तुलना में बहुत ही निचले स्तर पर है।

कृषि

प्रत्येक आधे घंटे में एक किसान द्वारा आत्महत्या किए जाने से देश में अधिकांश व्यक्तियों के लिए कृषि संकट बन गई है। मानव इतिहास में इस प्रकार की आत्महत्या सबसे खराब रिकार्ड को

दर्शाती है। यह राष्ट्रीय महामारी है। भारत शायद विश्व का एक ऐसा अनोखा देश है जहाँ पर बहुत बड़ी संख्या में भुखमरी है जबकि खाद्य पदार्थों का विशाल स्टॉक सरकारी गोदामों में सड़ जाता है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ की हड्डी रही है। यहाँ की आधी से ज्यादा जनसंख्या अपनी जीविका के लिए सीधे कृषि पर ही निर्भर है। कृषि वस्तुओं की कीमतें और उपलब्धता खाद्य सुरक्षा और 120 करोड़ की आबादी की कम से कम तीन–चौथाई जनसंख्या के सुख को प्रभावित करती हैं। कृषि उत्पादों की आपूर्ति, खेतिहर समुदाय द्वारा माँग और खेतिहर परिवारों से कु शल जनशक्ति की आपूर्ति औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों में वृद्धि को निर्धारित करती है।

निराशाजनक परिदृश्य

प्रकृति ने हमारे देश को प्रचुर और अनेकों प्राकृतिक संसाधन दिए हैं। यह कहावत कि 'भारत गरीब व्यक्तियों वाला एक धनी देश है' किसी अन्य क्षेत्र की अपेक्षा भारतीय कृषि के संदर्भ में सही है। भारतीय फसलों की पैदावार अन्य देशों द्वारा प्राप्त सबसे अच्छी पैदावार की तुलना में बहुत ही कम है। यहाँ तक कि लगभग सभी फसलों में विश्व की औसत पैदावार की अपेक्षा यह काफी कम है। भारतीय औसत पैदावार संभावित और क्षेत्र स्तरीय संपादित पैदावार स्तर की तुलना में भी बहुत कम है। अर्थात संभावित और वास्तविक पैदावारों के बीच अंतराल (उर्ध्वाधर अंतराल) बहुत ही महत्वपूर्ण है। उदाहरण के तौर पर, गेंहूँ के केस में शोध की दशाओं में पैदावार स्तर 4.20 टन प्रति हैक्टेयर है, किसानों के खेतों में प्रदर्शित पैदावार 3.32 टन प्रति हैक्टेयर है और वास्तविक औसत पैदावार 2.79 टन प्रति हैक्टेयर है। अन्य फसलों में उर्ध्वाधर अंतराल बहुत ज्यादा है। इसी प्रकार, अंतर–राज्यीय/अंतर–जिला उत्पादकता (उर्ध्वाधर/ त्रिविम अंतराल) में बहुत ज्यादा भिन्नता है। गेंहूँ के केस में उत्पादकता में अंतर–राज्यीय भिन्नता महाराष्ट्र में 1,406 किग्रा/ हैक्टेयर तक कम और पंजाब में 4,265 किग्रा/ हैक्टेयर तक ज्यादा होते हुए अधिक स्पष्ट है। इसी प्रकार चावल में अंतर–राज्यीय भिन्नता बिहार में 1,233 किग्रा/ हैक्टेयर से पंजाब में 3,876 किग्रा/ हैक्टेयर तक की भिन्नता है। इसी प्रकार उत्पादकता में अंतर–जिला भिन्नताएँ राज्यों के भीतर महत्वपूर्ण हैं।

कम पैदावार स्तर के अलावा भारतीय कृषि की अन्य महत्वपूर्ण समस्याएँ प्राकृतिक संसाधनों की कमी, कम संसाधन गहन फसलों से ज्यादा संसाधन गहन फसलों में फसल पद्धति का स्थानांतरण, सकल घरेलू उत्पाद में कृषि के हिस्से में कुल रोजगार में इसके हिस्से में गिरावट के बिना तेजी से कमी, लगातार कई वर्षों से कृषि में शामिल किसानों और अन्य व्यक्तियों का अपेक्षाकृत गरीब होता जाना, कृषि और जलवायु परिवर्तन के प्रति करीब 40 प्रतिशत किसानों की इच्छा का अभाव है।

सरकार द्वारा उत्पन्न आपदा

कुछ समय से अनुसरण की जा रही बड़ी नीतियों तथा भारत सरकार के रवैये से संकट बना हुआ है। देश में सरकारी गोदामों में बड़ी मात्रा में अनाजों के सड़ने के बावजूद बहुत बड़ी संख्या में भुखमरी विद्यमान है। यह 'समावेशी उन्नति' के भारतीय माडल का प्रत्यक्ष परिणाम है। इसके अतिरिक्त, क्योंकि खाद्यान्नों (गेंहूँ और चावल) की आपूर्ति ज्यादा सब्सिडीयुक्त कीमत पर की जाती है, स्थानीय खाद्यान्न (अधिकांशतः मोटा अनाज) प्रणाली क्षीण हो गई है। भारत सरकार और राज्य सरकारों द्वारा प्रदान की जाने वाली कई सब्सिडी धनी राज्यों, क्षेत्रों और किसानों को विषमतापूर्वक दी जा रही है; और इससे प्राकृतिक संसाधनों में कमी आ रही है तथा खेती की लागत बढ़ रही है।

अगला कदम

कृषि में कई मोर्चों पर उदाहरणात्मक बदलाव की जरूरत है। पहला और मुख्य बदलाव रोजगार परिवर्तन है। अन्य बदलावों में शामिल हैं– (1) उच्च वाह्य गैर–धारणीय/ अकार्बनिक इनपुट से उच्च आंतरिक धारणीय/ कार्बनिक इनपुट; (2) औद्योगिक खेती से जैवविविधता खेती; (3) उच्च तकनीक उन्मुखीकरण से उचित प्रौद्योगिकी; (4) केंद्रीकृत प्रणाली से विकेंद्रीकृत प्रक्रियाएँ; और (5)

संरक्षक–ग्राहक संबंध से सहभागितापूर्ण निर्णय लेना।

भारत में रोजगार

इस भाग में विभिन्न आयामों में रोजगार परिदृश्य को प्रस्तुत किया गया है जैसे क्षेत्रीय वितरण और परिवर्तन, रोजगार वृद्धि– ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में संपूर्ण और क्षेत्रीय, रोजगार ढाँचा और स्थिति श्रेणी द्वारा वृद्धि अर्थात, स्वरोजगार, नियमित और अनियमित, व्यवस्थित और अव्यवस्थित क्षेत्र द्वारा। इसमें रोजगार की गुणवत्ता, अल्प रोजगार, बेरोजगार तथा गरीबी भी शामिल है। इस भाग में वर्ष 1972–73 से किए गए राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (NSSO) के पंचवार्षिक (पाँच साल का) सर्वेक्षणों को शामिल किया गया है, जब रोजगार और बेरोजगार पर व्यापक जानकारी प्राप्त होनी शुरू हुई थी। NSSO तीन विभिन्न दृष्टिकोणों अर्थात एक साल की संदर्भ अवधि के साथ सामान्य स्थिति (US), एक सप्ताह की संदर्भ अवधि के साथ वर्तमान साप्ताहिक स्थिति (CWS) और संदर्भ सप्ताह के प्रत्येक दिन के दौरान अपनाई गई दैनिक गतिविधि के आधार पर वर्तमान दैनिक स्थिति (CDS) में रोजगार और बेरोजगार सूचकों को मापता है। US एवं CWS में मापे गए श्रम बल सूचक व्यक्तियों की संख्या में हैं और ब्वै में व्यक्ति–दिन में हैं।

रोजगार ढाँचा और प्रवृत्ति

वर्ष 2012–13 के लिए जब 12वीं पंचवर्षीय योजना शुरू हुई थी तो CWS मापदंड पर देश में श्रम बल का अनुमान 782 मिलियन था। इनमें से लगभग 51 प्रतिशत प्राथमिक क्षेत्र में काम में लगे हुए थे, लगभग 22 प्रतिशत द्वितीयक क्षेत्र में लगे हुए थे और लगभग 27 प्रतिशत तृतीयक क्षेत्र में लगे हुए थे। जबकि सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का हिस्से में वर्ष 1972–73 में 41 प्रतिशत से वर्ष 2009–10 में 15 प्रतिशत की कमी हुई, रोजगार में कमी बहुत ही धीमी वर्ष 1972–73 में 74 प्रतिशत से वर्ष 2009–10 में 51 प्रतिशत रही। क्योंकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि की अत्यधिक रूप से बड़ी साझेदारी होती है और कृषि में रोजगार में वृद्धि कम रही है, ग्रामीण क्षेत्रों में संपूर्ण रोजगार वृद्धि कम है। इसमें वर्ष 2004–05 / 2009–10 के दौरान 1.65 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से निरपेक्ष रूप में कमी आई है। समीक्षा की अवधि के दौरान शहरी रोजगार वृद्धि ज्यादा रही है। रोजगार की धारणा को सामान्य रूप से पारिश्रमिक या वेतनयुक्त नौकरी से समझा जाता है। भारत में रोजगार का मुख्य भाग यद्यपि स्वरोजगार से बना है। फिर भी कुल रोजगार में इस श्रेणी के हिस्से में कमी हुई है, अभी भी यह कर्मचारियों की अधिकता को दर्शाता है। इसका हिस्सा वर्ष 1972–73 में 61.4 प्रतिशत से वर्ष 2009–10 में 50.6 प्रतिशत तक कम हुआ है।

रोजगार की गुणवत्ता

रोजगार की गुणवत्ता के संबंध में नियमित मजदूरी या वेतन के लिए कार्य करना सर्वश्रेष्ठ सफलता माना जाता है। यह सामान्य रूप से बेहतर कमाई और नौकरी तथा सामाजिक सुरक्षा के अपेक्षाकृत रोजगार की नियमितता और स्थिरता प्रदान करता है। इस संबंध में अल्पकालिक श्रमिक श्रेणी की हालत खराब है। स्वरोजगार मिश्रित होता है– इसमें अपने बड़े खेतों में कार्य और ज्यादा आय वाला उद्यम साथ ही छोटे खेतों तथा उद्यमों में खुदा का लेखा कार्य शामिल हैं जिसमें गरीबी रेखा की आय की अपेक्षा कम आय होती है। वर्ष 2004–05 में अल्पकालिक श्रम के रूप में कार्य करने वाले 32 प्रतिशत व्यक्ति गरीबी रेखा की आय से कम कमाते थे; स्वरोजगार वाले व्यक्तियों का आँकड़ा 17.5 प्रतिशत था और नियमित कर्मचारियों का 11 प्रतिशत था। व्यवस्थित या औपचारिक क्षेत्र संपूर्ण सार्वजनिक क्षेत्र से बनता है और निजी क्षेत्र उद्यम 10 या उससे ज्यादा श्रमिकों को नियुक्त कर रहे हैं। यह वर्ष 1999–2000 में कुल रोजगार का केवल लगभग 14 प्रतिशत था और यही वर्ष 2004–05 में भी रहा। वर्ष 2009–10 में यह अनुपात बढ़कर 16 प्रतिशत हो गया। अभी भी 84 प्रतिशत श्रमिक अव्यवस्थित या अनौपचारिक क्षेत्र में हैं जिनकी नौकरी की कोई भी सुरक्षा नहीं है या कोई

भी सामाजिक सुरक्षा नहीं है। यहाँ तक कि औपचारिक क्षेत्र में भी आधे से ज्यादा श्रमिक अनौपचारिक श्रेणी में हैं जिनके रोजगार का कोई भी सुरक्षित कार्यकाल नहीं है। इसके अतिरिक्त चिंता का विषय यह है कि औपचारिक क्षेत्र में कार्यरत इस प्रकार के व्यक्तियों का अनुपात वर्ष 1999–2000 में 42 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2004–05 में 47 प्रतिशत और वर्ष 2009–10 में 51 प्रतिशत हो गया।

बेरोजगारी

वर्तमान बेरोजगारी दर (वर्ष 2009–10) के आधार पर वर्ष 2012–13 में बेरोजगार व्यक्तियों की संख्या 17.4 मिलियन होगी। लेकिन यह ऐसे व्यक्तियों की संख्या की सही तस्वीर नहीं है जिन्हें नए या वैकल्पिक रोजगार की किसी भी समय जरूरत होती है। ऐसे व्यक्ति भी हैं जिन्हें नियोजित के रूप में रिकार्ड किया गया है लेकिन वे गंभीर रूप से बेरोजगार हैं, जो बहुत थोड़े समय के लिए कार्य करते हैं। और ऐसे भी 'कार्यरत गरीब' हैं जो नियोजित हैं लेकिन वे केवल उतना ही कमा पाते हैं जो गरीबी से उबरने के लिए न्यूनतम आवश्यकता है। इस श्रेणी में नियोजिक श्रमिकों का एक बड़ा अनुपात आता है जो वर्ष 1999–2000 में लगभग 20 प्रतिशत तथा वर्ष 2004–05 में 21 प्रतिशत अनुमानित था और यह वास्तव में भारत में रोजगार समस्या का सबसे मुख्य भाग है।

12वीं योजना की शुरूआत में नए रोजगार की आवश्यकता वाले व्यक्तियों की संख्या का मोटा आकलन 51.35 मिलियन किया गया था। इसके अतिरिक्त योजना अवधि के दौरान 43 मिलियन अतिरिक्त व्यक्तियों की श्रम बल में शामिल होने की अपेक्षा की गई थी। अतः 12वीं योजना में योजना अवधि के दौरान 94 मिलियन अतिरिक्त रोजगार का सृजन करना है, यदि रोजगार की आवश्यकता वाले सभी व्यक्तियों को पूर्णकालिक और पर्याप्त रूप से लाभकारी कार्य प्रदान किए जाएँ।

अगला कार्यक्रम

जबकि नियमितता, आमदनी, उत्पादकता और सामाजिक सुरक्षा की संपूर्ण गुणवत्ता खराब है, यह फिर भी क्षेत्रों, उद्योगों और रोजगार के प्रकारों के बीच बदलता है। रोजगार गुणवत्ता के ढाँचागत पहलू रोजगार में कृषि की प्रधानता, अनौपचारिक रोजगार की पूर्वप्रधानता और स्वरोजगार और अल्पकालिक श्रम वर्गों की प्रधानता है। श्रम गहन क्षेत्रों तथा आर्थिक गतिविधियों के अलावा भारत में क्षेत्रों और आर्थिक गतिविधियों में श्रम उत्पादकता को बढ़ाने पर फोकस करने की आवश्यकता है जिसमें बहुत ज्यादा संख्या में श्रम बल को नियोजित किया जाता है।

शिक्षा का अधिकार

इस भाग के दो उपभाग हैं। पहला जमीनी स्तर पर प्रचलित वास्तविकता पर फोकस करने वाले पूर्ववर्ती वर्षों के दौरान देश में शिक्षा पद्धति की स्थिति की समीक्षा पेश करता है। इसके लिए अपनाया गया ढाँचा 4A ढाँचा है–उपलब्धता, पहुँच, स्वीकार्यता और अनुकूलन क्षमता (Availability, Accessibility, Acceptability and Adaptability)। दूसरे भाग में कुछ नीतियों और कार्यक्रम संबंधी मामलों तथा अगले कार्यक्रम का अवलोकन किया गया है।

उपलब्धता

उपलब्धता में तीन उप–सूचकों अर्थात विद्यालयों की संख्या या विद्यालयों का कवरेज, ढाँचा और विद्यालयों में प्रशिक्षित अध्यापक और विद्यालय शिक्षा की लागत को कवर किया जाता है। वर्ष 2011 में चार प्रतिशत बस्तियों में कम दूरी पर विद्यालयों का अभाव था। यह छोटा प्रतिशत वास्तव में बहुत ज्यादा आँकड़ा दर्शाता है। यह समस्या पहाड़ी और सुदूरवर्ती क्षेत्रों में ज्यादा गंभीर है। यह समस्या उच्च प्राथमिक विद्यालयों के केस में बहुत ही ज्यादा गंभीर है। खतरनाक प्रवृत्ति कई राज्यों में उद्योगों के गठन की आड़ में सरकारी विद्यालयों को बंद करने की रही है।

वर्ष 2010–11 में 10 विद्यालयों में से एक विद्यालय में पेयजल सुविधा का अभाव था, पाँच में से दो विद्यालयों में चालू सामूहिक शौचालय का अभाव था, यहाँ तक कि आधे विद्यालयों में विकलांग छात्रों के लिए ढालू सीढ़ी का अभाव था, पाँच में से दो विद्यालयों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय का अभाव था, पाँच में से तीन विद्यालयों में बिजली नहीं थी और पाँच में से केवल एक विद्यालय में कंप्यूटर था। करीब 40 प्रतिशत प्राथमिक विद्यालयों में छात्र और कक्षा के बीच का अनुपात 1 : 30 से ज्यादा था। ये सरकारी आँकड़े इन सुविधाओं की गुणवत्ता और उपयोगिता को नहीं प्रदर्शित करते हैं, ये केवल उनकी भौतिक स्थिति को प्रदर्शित करते हैं। अतः जमीनी स्तर पर वास्तविक स्थिति वास्तव में बहुत ही खराब है। एक तिहाई विद्यालयों में खेल के मैदान नहीं हैं। चार में से एक विद्यालय में पुस्तकालय नहीं है; इसके अतिरिक्त, पाँच में से केवल दो विद्यालयों में बच्चों के लिए पुस्तकालय की किताबें सुलभ हैं। यद्यपि वर्तमान में सभी विद्यालयों में 21 प्रतिशत अध्यापक पेशेवर तरीके से प्रशिक्षित नहीं हैं।

पहुँच

इसमें दो उप–भाग हैं: (1) सभी के लिए गैर–पक्षपाती पहुँच और (2) अधिकांश अपेक्षित व्यक्तियों को शामिल करने के लिए सकारात्मक समर्थन। सरकारी आँकड़े बताते हैं कि वर्ष 2010 में केवल 2.7 मिलियन बच्चे विद्यालय से वंचित थे। यद्यपि यह आँकड़ा विद्यालय में बच्चों की वास्तविक भागीदारी को प्रदर्शित नहीं करता है। जबकि अवास्तविक नामांकन ज्यादा है, अनुपस्थिति के संपूर्ण उदाहरणों को उपस्थिति की जाँच करने की व्यवस्थित प्रक्रिया में बने रहने की अनुमति देता है। भारत में शिक्षा पद्धति उसी ढाँचागत असमानता से बुरी तरह प्रभावित है जिसने पूरे समाज को त्रस्त कर दिया है। दलित, आदिवासी और मुस्लिम शिक्षार्थियों के बिरुद्ध भेदभाव कक्षाओं में स्पष्ट दिखाई पड़ता है। शिक्षा का अधिकार (RTE) अधिनियम में आदेश दिया गया है कि सभी निजी विद्यालयों को तीन वर्ष की अवधि के अंदर गुणवत्ता के न्यूनतम मानक को प्राप्त करना है और समयबद्ध ढंग से मान्यता प्राप्त करनी है। यह कई राज्यों में नहीं हो पाया है। दूसरा महत्वपूर्ण प्रावधान निजी विद्यालयों में उपेक्षित समुदायों के बच्चों के लिए आरक्षण प्रदान करना है। इसका निजी विद्यालय के प्रबंधन द्वारा जोरदार ढंग से विरोध किया गया।

स्वीकार्यता

स्वीकार्यता का अर्थ यह है कि शिक्षा की विषय–वस्तु उपयुक्त, गैर–भेदभावपूर्ण और सांस्कृतिक रूप से उचित तथा गुणवत्तायुक्त है; कि विद्यालय स्वयं सुरक्षित है और शिक्षक पेशेवर हैं। शिक्षा पद्धति में बच्चों को उनके सामाजिक–आर्थिक स्थिति और निवास की जगह के आधार पर भिन्न गुणवत्तायुक्त शिक्षा दी जाती है।

जबकि धनी व्यक्तियों के लिए प्रावधान के मानक पूरे विश्व में सर्वश्रेष्ठ हैं, गरीबों के लिए गुणवत्ता के मूलभूत मानकों को पूरा करने में हम असफल रहते हैं। देश के पाठ्यक्रम को राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा (NCF) 2005 के अनुसार होने की अपेक्षा की जाती है। यद्यपि 13वीं संयुक्त समीक्षा मिशन के अनुसार केवल 14 राज्यों ने अपने पाठ्यक्रमों को राष्ट्रीय रूपरेखा के अनुसार संशोधित किया है। राज्यों में जमीनी स्तर पर अनुपालन की सीमा जिसे NCF के अनुवर्ती होने का दावा किया जाता है, संदेहास्पद है।

अनुकूलन क्षमता

अनुकूलन क्षमता का अर्थ यह है कि शिक्षा को समाज की बदलती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विकसित किय जा सकता है, विशेष संदर्भ के लिए उपयुक्त होने हेतु स्थानीय रूप से अपनाया जा सकता है और महत्वपूर्ण सामाजिक चुनौतियों जैसे लिंग भेद को संबोधित किया जा सकता है। मूलभूत साक्षरता की कमी और हमारे विद्यालयों में बच्चों का संख्यात्मक कौशल गंभीर चिंता का विषय है। मूलभूत कौशल की कमी से आधार कमजोर हो जाता है जिससे माध्यमिक, उच्च

माध्यमिक और अंततः उच्च शिक्षा को सुनिश्चित करने के प्रयास किए जाते हैं।

जवाबदेही

शिक्षा का अधिकार अधिनियम और पूर्व में पारित कानून में डिलीवरी के लिए राज्य को जिम्मेदार ठहराने में माता–पिता, समुदाय, स्थानीय स्वशासन प्रणाली और विस्तृत सिविल सोसायटी की भूमिका के बारे में बताया गया है। यद्यपि यह सुझाव देने के लिए काफी सबूत है कि गठन हमेशा शिक्षा का अधिकार अधिनियम के अंतर्गत ढाँचे की पुष्टि नहीं करता है। अन्य ढाँचों विशेष रूप से पंचायती राज और शहरी शासन ढाँचों तथा सिविल सोसायटी के अस्तित्व और भूमिका की हमेशा उपेक्षा की जाती है।

नीति और बजटीय आवंटनों में बदलाव

हाल के वर्षों में महत्वपूर्ण नीति विकास शिक्षा पद्धति में निजी क्षेत्र के लिए वृहद भूमिका पर जोर है जिसमें विद्यालय शिक्षा का क्षेत्र शामिल है। संपूर्ण रूप से गुणवत्ता से संबंधित मुख्य मामलों का समाधान करने के लिए राज्य की तरफ से लगातार असफलता के कारण शिक्षा के निजीकरण में बढ़ोत्तरी हुई है। शिक्षा का अधिकार ऐतिहासिक महत्वपूर्ण पहल है, जिसको बजटीय आवंटनों में स्पष्ट और महत्वपूर्ण स्थान दिए जाने की आवश्यकता है। यद्यपि संपूर्ण बजटीय आवंटन में इस प्रकार की कोई भी पहल नहीं देखी गई है। इसके अतिरिक्त राज्य जिनकी विद्यालय शिक्षा में मुख्य भूमिका होती है, हाल के वर्षों में उनके शिक्षा व्यय में महत्वपूर्ण गिरावट आई है।

खाद्य सुरक्षा

भारतीय जनसंख्या में वर्ष 1993–94 से 2004–05 के दौरान कैलोरी और प्रोटीन ग्रहण में गिरावट आई है और भारत सरकार ने इस गिरावट को सामान्य बताया है। अल्पपोषण का दूसरा सूचक अपक्षय (लंबाई के लिए वजन)– जिसे संकटपूर्ण स्थिति के लिए संवेदनशील और उत्तरदायी माना जाता है– विकृत प्रदर्शन दर्शाता है। 15 अगस्त 2001 को विभिन्न मंत्रालयों द्वारा कार्यान्वित पोषण कार्यक्रमों के प्रभावी समन्वयन के लिए राष्ट्रीय पोषण मिशन की स्थापना की गई। अभी तक सरकार ने लक्ष्यित सार्वजनिक वितरण को प्रस्तुत किया है (और सार्वजनिक वितरण प्रणाली के कवरेज को कम किया है) और निम्नलिखित का कार्यान्वयन किया है–

(क) मजदूरी रोजगार योजना,

(ख) मध्याह्न भोजन योजना (MDMS),

(ग) एकीकृत बाल विकास सेवाएँ (ICDS),

(घ) गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली गर्भवती महिलाओं के लिए राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना (NMBS/ बाद में जननी सुरक्षा योजना (JSY) के रूप में पुनः प्रस्तुत),

(ङ) 65 वर्ष से ज्यादा आयु के आश्रयहीन व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना (NOAPS),

(च) वृद्ध एवं आश्रयहीन व्यक्तियों के लिए अन्नपूर्णा योजना, और

(छ) राष्ट्रीय परिवार हितकारी योजना (NFBS)।

सरकार ने जीवन चक्र दृष्टिकोण द्वारा पोषण की दृष्टि से कमजोर जनसंख्या को कवर करने का प्रयास किया। जब तक शिशु माँ की कोख में रहता है, उसे ICDS केंद्र से पूरक पोषण तथा अन्य पोषण एवं स्वास्थ्य सेवाएँ प्राप्त होती हैं और सबसे नजदीक के प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र/ पंचायत से मातृत्व लाभ मिलता है। बच्चे के जन्म लेने के बाद माँ को पूरक पोषण कार्यक्रम (SNP) साथ ही अन्य पोषण और स्वास्थ्य सेवाएँ मिलनी जारी रहती हैं। तीन वर्ष की उम्र पर बच्चे को यह लाभ सीधे ICDS से मिल सकता है। इस प्रकार का हक तब भी जारी रहता है जब उसका प्राथमिक विद्यालय में नामांकन होता है, यह MDMS के अंतर्गत पोषणयुक्त गर्म भोजन के रूप में दिया जाता है। किशोरावस्था में लड़की ICDS केंद्र की सेवाओं को प्राप्त करना जारी रख सकती है। वयस्क होने पर राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम द्वारा

मजदूरी रोजगार उन्हें बेरोजगारी के कारण भोजन की कमी को दूर करने में समर्थ बनाता है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली स्थिर सब्सिडीयुक्त कीमत पर चावल/ गेंहूँ खरीदने के लिए उपलब्ध है और यह कीमत की अस्थिरता और मौसमी उतार–चढ़ाव के विरुद्ध बचाव है। वृद्धावस्था में या जब विकलांगता या निराश्रयता आती है तो उस व्यक्ति की या तो मासिक नकद मदद या मुफ्त खाद्यान्नों द्वारा सहायता की जाती है।

मानसून सत्र 2013 में संसद ने खाद्य सुरक्षा विधेयक 2013 को पारित किया। कई सिविल सोसायटी कार्यकर्ताओं ने इस विधेयक की आलोचना की क्योंकि इस विधेयक में खाद्य सुरक्षा को केवल अनाजों तथा पके भोजन के वितरण तक घटा दिया गया था और दालों, बाजरा और तेल पर चुप्पी साध ली गई थी। वे भी लक्ष्य दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण थे। कार्यकर्ताओं ने हकदारी के बदले में नकद स्थानांतरण की योजना को प्रस्तुत करने और प्रस्तावित विधेयक के अंतर्गत लक्ष्यित लाभार्थियों तक पहुँचने के लिए विशिष्ट पहचान के लिए आधार (UID) का फायदा देने के लिए किए गए प्रावधानों पर आपत्ति जताई।

सरकारी नीतियों की मुख्य सीमा यह है कि यह अधिकतया योजना आधारित है और कृषि संकट में खाद्य संकट की जड़ों का पता लगाने के बजाए खाद्य एवं पोषण योजना की असफलता के संबंध में खाद्य संकट को समझने का प्रयास करता है। कई सिविल सोसायटी समूह बड़ी तस्वीरों को ध्यान में रखते हुए अल्पावधि उपाय के रूप में खाद्य एवं पोषण सेवाओं में शामिल रहे हैं। यद्यपि समस्या के प्रति अपने संपूर्ण दृष्टिकोण और दीर्घकालीन समाधानों में भिन्नता रखते हुए वे इस बात पर सहमत हैं कि वर्तमान कीमत–भोजन दृष्टिकोण उच्च रूप से अपर्याप्त है और खाद्य असुरक्षा को संबोधित करने के लिए गहरे कृषि संकट पर फोकस किया जाना जरूरी है।

सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP)

हाल के दिनों में PPP विकास के लिए महत्वपूर्ण दृष्टिकोण के रूप में उभरा है और नीति क्षेत्रों में मूलमंत्र हो गया है। सार्वजनिक सेवाओं के वितरण में सभी सरकारी संकटों के एक स्थान पर समाधान के रूप में प्रस्तुत PPP भारत में तेजी से बढ़ रहा है। जबकि अधिकांश PPPs ढाँचा क्षेत्र जैसे सड़क, बंदरगाह, हवाई अड्डों के निर्माण में रहे हैं, अब वे सामाजिक क्षेत्र में आगे बढ़ रहे हैं जो आगे आने वाले वर्षों में तेजी से बढ़ने वाली प्रवृत्ति है। भारत में PPPs का प्रवेश दो स्तरों पर 'तरकीब' द्वारा वर्णित प्रतीत होता है। पहला, उनका प्रवेश संसद में बहुत कम चर्चा के साथ हुआ है। दूसरे स्तर पर यह परिभाषित करने में ज्यादा संदेहास्पद स्थिति है कि कौन PPP को गठित करता है। व्यवहार में कई सेवाओं जैसे किसी इमारत या अस्पताल के उपकरणों के रखरखाव के लिए बाहरी स्रोत से सेवाएँ प्राप्त करने से लेकर किसी ढाँचे में निर्माण का ठेका देने तक सभी PPPs से संबंधित हैं। आज भारत में 785 PPP परियोजनाएँ हैं, जिन्हें ₹383,332.06 करोड़ की अनुमानित परियोजना लागत पर कार्यान्वित किया जा रहा है और विभिन्न माडलों के माध्यम से संचालित किया जा रहा है।

सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) और सार्वजनिक जवाबदेही

PPPs संयुक्त सहयोग और गैर–वर्गीकृत व्यवस्था हैं जो निजी कंपनी और सार्वजनिक संस्था के बीच पारंपरिक प्रधान– एजेंट संबंध का अनुसरण नहीं करते हैं जहाँ एक प्रदान करता है और दूसरा उसे प्राप्त करता है। महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इन PPPs की कौन निगरानी करता है? किस प्रकार सार्वजनिक जवाबदेही कार्य करती है? बहुत दिनों से नागरिक समूहों और सिविल सोसायटी संगठनों की तरफ से PPP को RTI के अंतर्गत लाने का दबाव रहा है। PPP को RTI के अंतर्गत लाने का प्रतिरोध निजी क्षेत्र और सरकार के अंदर से किया इस आधार पर किया जाता है कि RTI केवल 'सार्वजनिक प्राधिकार' को कवर करता है। जब

CAG को PPP की जाँच–पड़ताल करने का प्रश्न खड़ा होता है तो बहस बहुत ज्यादा अलग नहीं होती है। अभी तक CAG की भूमिका PPP परियोजनाओं के लिए दिशानिर्देश जारी करने तक सीमित है। वर्तमान नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक, विनोद राय के अनुसार ऐसे PPP को CAG अधिदेश के अधीन लाने की आवश्यकता है जिनमें सार्वजनिक व्यय शामिल है। इसी प्रकार के विचार प्रधानमंत्री और अन्य मंत्रियों द्वारा भी सार्वजनिक रूप से व्यक्त किए गए हैं। फिर भी PPP की CAG समीक्षा का एक साथ प्रतिरोध होता है।

सार्वजनिक निजी भागीदारी (PPP) और निष्पक्षता

PPP राज्य और नागरिक के बीच संबंध की गतिकी को बदलता है और नागरिकों को उपभोक्ता बनाता है। अतः यह दृष्टिकोण कि नागरिक को 'सेवाओं को प्राप्त करने का अधिकार है' को इस दृष्टिकोण से बदला जा रहा है कि 'उपभोक्ता/ग्राहक' के रूप में उन्हें सार्वजनिक सेवाओं को खरीदना जरूरी है।

अंततः दो तथ्य स्पष्ट हैं। पहला, PPPs मजबूत स्थिति बनाते हुए प्रतीत हो रहे हैं। दूसरा, उनकी कार्यपद्धति कई चुनौतियों से ग्रस्त है जिसमें उनकी जवाबदेही और निष्पक्षता के बारे में चिंता सबसे बड़ी है।

न्यायपालिकाः निष्पादन, सुधार एवं जवाबदेही

लोकतंत्र में न्यायपालिका को नागरिकों के मूल अधिकारों और हकदारी की रक्षा करने तथा कानून के समक्ष प्रत्येक नागरिक की समानता तथा कार्यपालिका की जवाबदेही को सुनिश्चित करने की महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है। कई केसों में जिस प्रकार से न्यायालय ने हस्तक्षेप किया है और उन्होंने निर्देश दिए हैं उससे यह सुझाव देना चाहिए कि भारत 'न्यायिक सह–शासन' साक्षी हो रहा है। जबकि न्यायालय सक्रिय प्रतिभागी बना है, महत्वपूर्ण प्रश्न उठते हैं कि क्या उच्चतम न्यायालय उतना सुगम रहा है जितना वह पहले था। इस अध्याय में न्यायपालिका के अंदर मामलों तथा चुनौतियों पर भी चर्चा की गई है।

मुख्य मामलों द्वारा न्यायिक निष्पादन का मानचित्रण

इस भाग में 20 ऐतिहासिक फैसलों के बारे में पाँच वर्गों– चुनाव सुधार; सरकारी प्रयोजन/ प्रबंध पर पूछताछ; पर्यावरण और विकास के मामले; पंचायत और ग्रामीण क्षेत्रों में उभरते कानूनी मामले तथा मानवाधिकार में चर्चा की गई है। कुछ केसों की चर्चा नीचे की जा रही है।

चुनाव सुधार

चुनाव सुधार भाग में वर्ष 2013 के अंत में उच्चतम न्यायालय द्वारा कई पहलुओं पर लिए गए निर्णय के बारे में चर्चा की गई है। जैसे बैलेट पेपर/ इलेक्ट्रानिक वोटिंग मशीन (EVM) में 'उपरोक्त में से कोई नहीं' (NOTA) विकल्प को सम्मिलित करना, अपराधी निर्वाचित प्रतिनिधि की तत्काल अयोग्यता, सजा प्राप्त व्यक्ति को चुनाव लड़ने से रोकना और मुख्य सूचना आयोग का आदेश कि "राजनीतिक दल 'सार्वजनिक प्राधिकार' की सुविधाओं के अंतर्गत आते हैं" जिन्हें सूचना का अधिकार, 2005 के अंतर्गत सूचना प्रदान करने की आवश्यकता होती है। इन आदेशों को कई लोगों द्वारा चुनावी सुधारों की नई लहर के रूप में देखा गया। यद्यपि इन निर्णयों के प्रति राजनीति प्रतिक्रियाओं द्वारा आशा धूमिल हुई है। जहाँ पर निर्णय राजनीतिज्ञों को सीधे प्रभावित कर रहा था वहाँ पर उन्होंने इसके प्रति न्यायिक रीति से और वैधानिक रूप से और तत्परतापूर्वक प्रतिक्रिया दी।

सरकारी प्रयोजन/ प्रबंध

इस भाग में दो केसों– काला धन का वापसी और द्वितीय पीढ़ी (2G) मोबाइल सेवा घोटाले के बारे में चर्चा की गई है।

काला धन मामलाः ऐसा मामला जिसने काफी विवाद खड़ा किया और जनता का बहुत ज्यादा ध्यान खींचा वह उच्चतम न्यायालय में दायर की गई एक जनहित याचिका थी जिसमें भारतीय संघ से

विदेशी बैंकों में जमा बेहिसाब काले धन को वापस लाने के लिए कहा गया था। न्यायालय भारत सरकार की निष्क्रियता से असंतुष्ट था और उसने इस मामले को निपटाने के लिए एक उच्च स्तरीय समिति (HLC) नियुक्त किया। इस मामले का दूसरा पहलू विविध दस्तावेजों (जिसमें नाम शामिल हैं) और लिकटेंस्टीन की रियासत, यूरोप में एक छोटा स्थल रुद्ध राष्ट्र, में विविध बैंक खातों में भारतीय नागरिकों के बैंक विवरणों के खुलासे से संबंधित था। भारत सरकार की यह प्रतिक्रिया थी कि जर्मनी के साथ दोहरे कराधान से बचने और राजकोषीय अपवंचन की रोकथाम के लिए किया गया करार भारत संघ को इन नामों का खुलासा करने से रोक रहा है। न्यायालय ने कथित करार को देखने के बाद यह फैसला सुनाया कि यह संबंधित दस्तावेजों के खुलासे को नहीं रोकता है और उसने जाँच के लिए HCL को विशेष जाँच दल (SIT) में परिवर्तित होने का आदेश दिया जिसकी अध्यक्षता उच्चतम न्यायालय के दो सेवानिवृत्त न्यायाधीश करेंगे।

द्वितीय पीढ़ी (2G) मोबाइल सेवा घोटाला मामलाः उच्चतम न्यायालय द्वारा द्वितीय पीढ़ी (2G) मोबाइल सेवा लाइसेंस आवंटन केस में पारित किए गए कई आदेशों ने सरकार को लगभग कगार पर ला दिया। न्यायालय ने आदेश दिया कि राज्य लोगों के ट्रस्टी के रूप में प्राकृतिक संसाधनों का कानूनी मालिक है और यद्यपि इसे इसके वितरण के लिए सशक्तीकृत किया गया है, वितरण की प्रक्रिया को संवैधानिक सिद्धांतों द्वारा निर्देशित किया जाना जरूरी है जिसमें समानता और वृहद सार्वजनिक वस्तु का सिद्धांत शामिल है। ट्राई और संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री की भूमिका को उच्चतम न्यायालय के निष्कर्ष में दोषी ठहराया गया और भारत सरकार द्वारा निजी कंपनियों को प्रदान किए गए सभी 122 लाइसेंसों को उच्चतम न्यायालय ने निरस्त कर दिया। इस फैसले के दो पहलुओं ने काफी विवाद उत्पन्न किया। पहला, न्यायालय का पहले आओ पहले पाओ नीति नामंजूर करना तथा नीलामी को एकमात्र उपाय बताना एकपक्षीय फैसला है। यद्यपि, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि पहले आओ पहले पाओ नीति को न्यायालय द्वारा रद्द करने का आधार सुहृद पूंजीवाद से संबंधित है जो आर्थिक नीति में व्याप्त है। दूसरा, यह कि न्यायालय ने हस्तक्षेप करते हुए कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र में कदम रख दिया है जो अनिवार्य रूप से एक नीतिगत मामला है। यद्यपि न्यायालय ने फैसला सुनाते वक्त अपनी भूमिका के प्रति ज्यादा जागरूक था और इसका अच्छा पक्ष समर्थन किया कि इस प्रकार के मामले में हस्तक्षेप करने की आवश्यकता क्यों है।

बड़ी परियोजनाएँ, पर्यावरण तथा विकास संबंधी मामले

इस भाग में कई मामलों पर चर्चा की गई है जिसमें न्यायपालिका ने परियोजनाओं में सुरक्षा और राहत उपायों को निर्धारित किया है जैसे कुडनकुलम परमाणु ऊर्जा संयंत्र, उत्तराखंड में जलविद्युत परियोजनाएँ, ओडिशा में खनन परियोजना, ग्रेटर नोएडा प्राधिकरण द्वारा भूमि अधिग्रहण, केयर्न–वेदांता सौदा आदि।

कुडनकुलम परमाणु ऊर्जा संयंत्र (KNPP) मामलाः उच्चतम न्यायालय ने कहा कि KNPP की स्थापना भारत के लोगों के कल्याण के लिए परमाणु ऊर्जा को विकसित, नियंत्रित और उपयोग करने के लिए भारत की राष्ट्रीय नीति के भाग के रूप में की गई है। 17 सुझाए गए सुरक्षा उपायों में से 12 को पहले से ही कार्यान्वित कर दिया गया है और बाकी को अतिरिक्त सुरक्षा के लिए चरणबद्ध तरीके से कार्यान्वित किया जाना है। यद्यपि कुछ निर्देश जारी किए गए थे जैसे संयंत्र को तब तक चालू नहीं किया जाएगा जब तक AERB, NPCIL, परमाणु ऊर्जा विभाग (DAE) इसको चालू करने के लिए अंतिम मंजूरी नहीं दे देता है। सभी संबंधित एजेंसियों को यह निर्देश दिया गया कि वे इस मामले के प्रत्येक पहलू का निरीक्षण करेंगे जिसमें संयंत्र की सुरक्षा, पर्यावरण पर प्रभाव, विभिन्न घटकों की गुणवत्ता और संयंत्र को शुरू करने से पहले व्यवस्था शामिल है।

उत्तराखंड में श्रीनगर जल विद्युत परियोजना (SHEP): न्यायालय ने कहा कि संबंधित 1994 अधिसूचना केवल प्रत्याशित प्रभाव से लागू होती है और आगे कहा कि चूँकि वर्ष 1985 में मंजूरी प्रदान कर दी गई थी और चालू परियोजना पूरी होने वाली थी अतः इस अवस्था में सार्वजनिक सुनवाई के रूप में कोई भी उद्देश्य नहीं प्राप्त किया जाएगा। यद्यपि न्यायालय ने राज्य में जल विद्युत परियोजनाओं की अल्पावधि में तेजी से बढ़ने पर चिंता व्यक्त की; और अभी परियोजना घटकों जैसे बाँधों, सुरंगों, विस्फोटन, बिजलीघर, गंदगी निपटान, खनन, वनों की कटाई आदि का पारिस्थितिक तंत्र पर सामूहिक प्रभाव का वैज्ञानिक रूप से परीक्षण किया जाना है। न्यायालय ने पर्यावरण एवं वन मंत्रालय (MoEF) और राज्य को नए आदेश तक किसी भी जल विद्युत परियोजना को कोई भी पर्यावरण या वन अनुमति न दिए जाने और विस्तृत अध्ययन करने कि कोई भी इस प्रकार की विद्यमान और निर्माणाधीन परियोजना पर्यावरणीय अवक्रमण को योगदान कर रही है, इसके निर्देश जारी किए हैं।

पर्यावरण सिविल दायित्वः दूसरे मामले में जिसमें पर्याप्त पर्यावरणीय कानूनी सवाल शामिल हैं, उच्चतम न्यायालय को फैसला करने की आवश्यकता थी कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर वृहद ताँबा संयंत्र को बंद करने का निर्णय देना सही था कि यह संयंत्र मुन्नार की खाड़ी में 25 किमी के अंदर स्थित इक्कीस द्वीपों में से चार द्वीपों में स्थित था। उच्च न्यायालय ने इस संयंत्र को बंद करने का निर्देश दिया क्योंकि कंपनी ने जल अधिनियम, 1974 के अधीन तमिलनाडु प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (TNPCB) द्वारा जारी स्वीकृति आदेश की शर्तों का उल्लंघन किया था। उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के आदेश को यह अवलोकन करते हुए रद्द कर दिया कि कंपनी ने 30 निर्देशों में से 29 निर्देशों का पालन किया है और वायु अधिनियम के अधीन केवल एक निर्देश का पालन किया जाना बाकी है। यद्यपि न्यायालय ने कंपनी पर वित्तीय देनदारी लगाया, जिसकी ब्याज राशि का प्रयोग संयंत्र के आसपास के पर्यावरण को सुधारने के लिए किया जाना था जिसमें जल और मृदा शामिल थी। यह निर्णय 'प्रदूषक द्वारा भुगतान का सिद्धांत' और 'पारिस्थितिक बहाली का सिद्धांत' को सक्रिय रूप से प्रभावित कर सकता है जो मुख्य पारिस्थितिक सिद्धांत हैं। इस पर विचार करते समय कि बंदी का स्थानीय आजीविका और तांबे के राष्ट्रीय उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव है, भारी मुआवजा राशि लगाने में यह केस आगामी वर्षों में मजबूत पर्यावरणीय सिविल दायित्व के लिए मानदंड के रूप में कार्य कर सकता है।

भूमि अधिग्रहण, पुनर्वास एवं पुनरुद्धार मामलेः दूसरे मामलों में जिसने वर्षों से जनता का ध्यान आकर्षित किया है, इलाहाबाद उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय ने निष्कर्ष निकाला कि ग्रेटर नोएडा प्राधिकरण (GNOIDA) ने बड़े स्तर पर इमारत और निर्माण के लिए जमीन का अधिग्रहण करने के लिए अपने अधिकार का दुरुपयोग किया। उच्चतम न्यायालय ने पाया कि अधिग्रहण की अवस्था में ग्रेटर नोएडा प्राधिकरण राज्य सरकार को इस बात का खुलासा नहीं करना चाहता था कि इस जमीन का प्रयोग बिल्डरों द्वारा हाउसिंग काम्प्लेक्सों के निर्माण के लिए प्रयोग किया जाएगा और अतः जमीन के अधिग्रहण की संपूर्ण कार्यवाही अधिकारों का दुरुपयोग थी। वर्ष 2011 में भूमि अधिग्रहण के दूसरे मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अवलोकन भी किया कि न्यायालयों को बहुत ही सावधानीपूर्वक इन प्रश्नों का परीक्षण करना जरूरी है जब विचारहीन अधिग्रहण के नाम पर छोटे भारतीय अपनी छोटी संपत्ति को खो देते हैं। न्यायालयों को अधिग्रहण की स्वीकृति प्रदान करने से पहले अपनी न्यायिक समीक्षा के अधिकार का प्रयोग करना तथा अपना ध्यान सामाजिक एवं आर्थिक न्याय पर फोकस करना जरूरी है। सार्वजनिक महत्व के इन प्रश्नों का परीक्षण करते समय न्यायालय विशेष रूप उच्च न्यायालय सिर्फ निर्णायक के रूप में कार्य नहीं कर सकते हैं बल्कि संवैधानिक योजना में कार्यकर्ता उत्प्रेरक का कार्य करते हैं।

पंचायतें और ग्रामीण क्षेत्रों में उभरते कानूनी मामले

73वें संशोधन के अधीन प्रतिकूल कानूनी संकेतः सार्वजनिक वितरण प्रणाली (PDS) को कार्यान्वित करने के लिए अधिकार निर्दिष्ट करने के बारे में मामले में उच्चतम न्यायालय ने अवलोकन किया कि 'यह स्पष्ट है कि ग्यारहवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 243G वैधानिक सत्ता का स्रोत नहीं है, और यह केवल योग्य प्रावधान है जो राज्य को कार्य प्रदान करता है और स्थानीय निकायों को अधिकार तथा जिम्मेदारियाँ सौंपता है।' न्यायालय द्वारा यह व्याख्या व्यापक रूप से आयोजित धारणा के विरुद्ध है कि राज्य सरकारों द्वारा पंचायतों को अधिकार का स्थानांतरण 73वें संवैधानिक संशोधन द्वारा अनिवार्य कर दिया गया है। और यह उसके विरुद्ध है जो वर्ष 2013 में दूसरे निर्णय में कहा गया है, जिसमें यह संविधान की धारा 226 और/ या 227 के अधीन याचिका दायर करने के लिए ग्राम पंचायत के अधिकार को कायम रखता है और यह राज्य सरकार के एक अधिकारी द्वारा पारित किए गए एक आदेश को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय जाता है जिसमें ग्राम पंचायत की कार्यवाही/ समाधान को रद्द करने का प्रयास किया गया था।

खाप पंचायतें और परिवार को कलंक से बचाने हेतु की गई हत्याः उच्च और निम्न जातियों के व्यक्तियों के बीच विवाद वाले एक आपराधिक मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह ध्यान दिलाया कि इस समय निम्न जातियों के विरुद्ध भेदभाव और अछूत की बुरी आदत को फैलाने का कार्य समाज में बहुत ज्यादा हो रहा है। न्यायालय ने कहा कि देश के कई भागों से परेशान करने वाली खबरें आ रही हैं कि ऐसे युवा और युवतियाँ जो अंतर्जातीय विवाह करने जा रहे हैं, उन्हें डराया जा रहा है या वास्तव में उनसे हिंसा की जा रही है, जो पूर्णतया गैर–कानूनी है और वे लोग जो इसे कर रहे हैं उन्हें गंभीर सजा दी जानी जरूरी है। और यह निर्देश दिया गया कि इस प्रकार के अत्याचार के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों के विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही करने के अलावा राज्य सरकार संबंधित जिला मजिस्ट्रेट/कलेक्टर और एसएसपी/ एसपी साथ ही अन्य अधिकारियों को निलंबित कर देगी और उन्हें आरोप पत्र देगी तथा उनके विरुद्ध विभागीय कार्यवाही करेगी यदि उन्होंने (1) पहले से ही इस घटना के बारे में जानकारी होने के बाद भी इसे होने से नहीं रोका है, या (2) यदि ऐसा होता है तो उन्होंने अपराधी को तुरंत गिरफ्तार नहीं किया है और उनके विरुद्ध आपराधिक कार्यवाही नहीं की है, क्योंकि हमारी राय में वे इस संबंध में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जवाबदेह होंगे।

मानवाधिकार की रक्षा

नेशनल कैंपेन फार डिग्निटी एंड राइट्स ऑफ सीवरेज एंड एलाइड वर्कर्स ने दिल्ली उच्च न्यायालय में वर्ष 2007 में सीवेज श्रमिकों की दुर्दशा को उजागर करने के लिए एक याचिका दायर की। उच्च न्यायालय की डिविजन बेंच ने एक विस्तृत आदेश पारित किया जिसमें (क) ठीक होने तक मुफ्त चिकित्सकीय परीक्षण एवं इलाज; (ख) बीमारी के दौरान सेवाओं से निलंबित न करने; (ग) कार्य करते हुए बीमारी, रोग या दुर्घटना के लिए कर्मकार मुआवजा अधिनियम, 1923 के प्रावधानों के अनुसार क्षतिपूर्ति; (घ) किसी भी श्रमिक की मृत्यु पर रुपए एक लाख का अनुग्रहपूर्वक हरजाना; सभी सांविधिक देय राशि जैसे सभी सीवर श्रमिकों को भविष्य निधि, ग्रेच्युटी और बोनस का भुगतान करना/ भुगतान सुनिश्चित करना जिसमें संविदा श्रमिक भी शामिल हैं; (ङ) याचिकाकर्ता संगठन की सलाह से सभी सीवर श्रमिकों को आधुनिक सुरक्षात्मक उपकरण प्रदान करने के लिए जवाबदेह का आदेश दिया गया। इस मामले को बनाए रखने पर उच्चतम न्यायालय के समक्ष सरकारी एजेंसियों की आपत्ति के उत्तर में न्यायालय ने एक विस्तृत बयान में अन्य बातों के साथ यह कहा कि यह सबसे ज्यादा दुर्भाग्यपूर्ण है कि जब राज्य के तीन घटकों में से एक अर्थात न्यायपालिका ने उन लोगों के लिए समानता, जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार को सुनिश्चित करने के लिए आदेश जारी किया है जो

गरीबी, निरक्षरता और उपेक्षा से त्रस्त हैं और वंचितों के लाभ के लिए अधिनियमित कानूनों के कार्यान्वयन के लिए निर्देश दिए गए हैं तो न्यायिक सक्रियता या न्यायिक महत्वाकांक्षा के दलदल को बढ़ाते हुए एक सैद्धांतिक बहस शुरू हो गई है और समाज के कमजोर वर्गों के लिए जारी आदेशों को उच्च न्यायालयों में चुनौती निरपवाद रूप से चुनौती दी जा रही है। इस अवलोकन के बाद उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा कि इस तर्क को रद्द करने के लिए थोड़ी सी भी झिझक नहीं होती है कि निर्देशों को जारी करते हुए उच्च न्यायालय ने राज्य की वैधानिक सत्ता को स्वीकृत किया है। जो भी उच्च न्यायालय ने किया है वह यह सुनिश्चित करने के अलावा कुछ भी नहीं है कि वे लोग जो ऐसे कार्य को करने के लिए नियुक्त/ शामिल किए गए हैं जो स्वाभाविक खतरनाक है और उनके जीवन के लिए खतरा है, उन्हें जीवन रक्षक उपकरण प्रदान किए जाएँ और नियोक्ता उनकी सुरक्षा और स्वास्थ्य की जिम्मेदारी ले।

इस वर्ग में विचार–विमर्श करने योग्य अंतिम निर्णय इस बात पर एक केस अध्ययन है कि किस प्रकार उच्चतम न्यायालय ने पूरे देश में दो दशकों से जारी बंधुआ मजदूरों की समस्या को निपटाया। उच्चतम न्यायालय ने अक्टूबर 2012 में कुछ महत्वपूर्ण निर्देश दिए। इसने जिला मजिस्ट्रेट को बंधुआ श्रम व्यवस्था (उन्मूलन) अधिनियम, 1976 के प्रावधानों को प्रभावी ढंग से कार्यान्वित करने के निर्देश दिए। इसके अतिरिक्त न्यायालन ने NHRC को 1976 अधिनियम की प्रभावी ढंग से निगरानी और कार्यान्वित करने के निर्देश दिए और राज्यों को संशोधित रिपोर्ट में उजागर NHRC द्वारा पारित आदेशों के अनुपालन को सुनिश्चित करने की आवश्यकता बताई।

न्यायपालिका के समक्ष मामले और चुनौतियाँ

इस भाग में न्यायपालिका में मामलों और चुनौतियों का वर्णन किया गया है जिसमें न्यायिक नियुक्ति आयोग का आरंभ, उच्चतम न्यायालय के बदलते चरित्र पर महत्वपूर्ण विचार, लंबन, विचाराधीनता, कम सजा की दर, मूल्यांकन, निर्णय की उपयुक्तता, भ्रष्टाचार, कठोरता आदि शामिल हैं। यह ध्यान दिलाता है कि न्यायपालिका की पहुँच विशाल पिछले शेष कार्यों और जटिल प्रक्रिया के कारण कम रही है। बहुत ज्यादा पिछले शेष कार्य के कारण बहुत ज्यादा भरे जेलों में विचाराधीन को कारावास में भेजने में देर हो रही है। यह मुकदमे की ज्यादा लागत को भी बढ़ावा देती है।

उच्चतम न्यायालय का बदलता चरित्र

इस भाग में यह ध्यान दिलाया गया है कि उच्चतम न्यायालय विशेष अनुमति याचिकाओं (SLPs) को दैनिक रूप से देखते हुए अपील की जनरल कोर्ट के चरित्र को अपना रहा है जिसमें महत्वपूर्ण संवैधानिक और ठोस कानूनी मामले शामिल नहीं होते हैं। इस भाग में इस अभिकथन के समर्थन में बहुत ही ज्यादा रुचिकर आँकड़ों और साक्ष्य को प्रस्तुत किया गया है:

- जून 2013 तक 35,439 SLPs जिसमें महत्वपूर्ण संवैधानिक और ठोस कानूनी मामले शामिल नहीं है, न्यायालय में विचाराधीन हैं।
- संविधान की धारा 32 के अधीन मूल अधिकारों को लागू करने के लिए समादेश याचिकाएँ न्यायालय द्वारा स्वीकृत वार्षिक याचिकाओं के एक प्रतिशत से भी कम है। औसतन केवल लगभग 1 प्रतिशत न्यायालय के निर्णय PIL से संबंधित हैं।
- औसतन पिछले पाँच वर्षों से सेवा मामले जिसमें सरकारी कर्मचारी शामिल हैं, में 16 प्रतिशत न्यायालय के निर्णय लिए गए; प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष कर मामले 13 प्रतिशत हैं। भूमि अधिग्रहण मामले लगभग 9 प्रतिशत हैं, जबकि आपराधिक मामले जो निचली अदालतों के कार्य भार को प्रभावित करते हैं, वे 21 प्रतिशत हैं।
- आज 2 प्रतिशत स्वीकृत मामलों में समादेश याचिकाएँ शामिल हैं, अधिकांशतः इसका कारण यह है कि न्यायाधीशों ने इस प्रकार के वादियों को उच्चतम न्यायालय जाने से

हतोत्साहित किया है और इसके बजाए उन्हें उच्च न्यायालय की तरफ भेजा है।

स्थगित एवं विचाराधीन

यह कहावत है कि भारतीय न्यायपालिका में न्याय में देरी का अर्थ न्याय से वंचित रहना है, विख्यात है। न्यायालय में करोड़ों मामले लंबित हैं– कुछ तो तीन से ज्यादा दशकों से लंबित हैं। लंबित मामलों की संख्या वर्ष 2004 में 2.81 करोड़ से बढ़कर वर्ष 2011 में 3.17 करोड़ हो गई। कुल विचाराधीन मामलों में आपराधिक मामलों का अनुपात ज्यादा है; यह लगभग 2 : 1 के अनुपात में है। यह मुख्य रूप से निचली अदालतों में आपराधिक मामलों की अधिकता के कारण है। उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय में सिविल मामलों का अनुपात बिल्कुल ज्यादा है जो तीन–चौथाई से भी ज्यादा है। यह सिविल मामलों में न्यायपालिका तक पहुँचने में लोगों की अरुचि को दर्शा सकता है। यह भौतिक और वित्तीय दोनों रूप से न्यायपालिका/ न्यायालयों तक अगम्यता के कारण हो सकता है। भारत सरकार ने इस मामले को समझा और वर्ष 2008 में ग्राम न्यायालय योजना की शुरूआत की; यद्यपि इस योजना का कोई लाभ लेने वाला नहीं है। यह जमीनी स्तर पर न्यायालयों के न्यायिक निर्णय के प्रति लोगों की उदासीनता को भी दर्शाता है। चार उच्च न्यायालयों– इलाहाबाद, मद्रास, कलकत्ता और बंबई उच्च न्यायालयों में कुल 50 प्रतिशत लंबित मामले हैं। चार राज्यों– उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल और गुजरात में कुल 50 प्रतिशत लंबित मामले हैं। न्यायालयों की संख्या/ न्यायाधीशों की संख्या में बढ़ोत्तरी, नई प्रौद्योगिकी का प्रयोग/उपलब्धता में बढ़ोत्तरी, ढाँचागत विकास के लिए निधियों के आवंटन में बढ़ोत्तरी, वैकल्पिक न्याय की विधियों/ रास्तों में बढ़ोत्तरी आदि के बावजूद विचारधीन मामले ज्यादा हैं यदि उनमें हाल के वर्षों में बढ़ोत्तरी नहीं हुई है।

वर्ष 2009 के दृष्टिकोण विवरण में उस समय के कानून मंत्री एम0 विरप्पा मोइली ने 1 जनवरी 2009 तक सभी विचाराधीन मामलों को 31 दिसंबर 2011 तक निपटाने के लिए कई उपायों को प्रस्तावित किया। दृष्टिकोण विवरण के अनुसार सरकार अल्पकालिक न्यायाधीशों की भर्ती करने तथा अन्य कार्मिकों को बढ़ाने के लिए अतिरिक्त निधि प्रदान करना चाह रही थी ताकि न्यायालयों को शिफ्ट में चलाया जा सके और विचाराधीन मामलों को निपटाया जा सके। यद्यपि इस दिशा में कोई भी प्रगति नहीं हुई है।

न्यायालयों में रिक्तियाँ

जिला और अधीनस्थ न्यायालयों में न्यायाधीशों की स्वीकृत संख्या जनवरी 2006 में 14,412 से बढ़कर सितंबर 2010 में 17,151 हो गई और सितंबर 2011 में 18,123 हो गई है। यद्यपि रिक्तियों का अनुपात जनवरी 2006 में 19 प्रतिशत से बढ़कर सितंबर 2011 में 21 प्रतिशत हो गई है। उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की स्वीकृत संख्या अप्रैल 2006 में 726 से बढ़कर फरवरी 2011 में 895 हो गई और जनवरी 2012 में यही स्थिति बनी रही। लेकिन रिक्तियों का अनुपात अप्रैल 2006 में 21 प्रतिशत से तेजी से बढ़कर फरवरी 2011 में 33 प्रतिशत हो गई और जनवरी 2012 में थोड़ी घटकर 31 प्रतिशत रह गई। इसी अवधि के दौरान उच्चतम न्यायालय में न्यायाधीशों की संख्या 26 से बढ़कर 31 हो गई है। लेकिन रिक्तियाँ वर्ष 2006 में दो से बढ़कर 2012 में दोगुनी यानी चार हो गई हैं। रिक्तियों का स्तर इलाहाबाद उच्च न्यायालय में 50 प्रतिशत, जम्मू और श्रीनगर उच्च न्यायालय में 50 प्रतिशत और झारखंड में 50 प्रतिशत के नजदीक है। जिला और अधीनस्थ न्यायालयों में रिक्तियाँ बहुत ज्यादा हैं जो मेघालय में 83 प्रतिशत, मिजोरम में 52 प्रतिशत, मणिपुर में 48 प्रतिशत और गुजरात में 47 प्रतिशत है।

विचाराधीन एवं दोषसिद्धि की दर

विचाराधीन मामलों का एक भयानक परिणाम विचाराधीन कैदियों का लंबा कारावास है। भारत में लगभग तीन–चौथाई कैदी विचाराधीन हैं। वर्ष 2010 में कानून मंत्रालय द्वारा वितरित किए गए एक नोट के अनुसार, 'पूरे देश की जेलों में तीन लाख से भी

ज्यादा विचाराधीन कैदी हैं। उनमें से लगभग दो लाख कैदियों को मुख्य रूप से न्याय वितरण प्रणाली में देरी के कारण कई वर्षों से कैद रखा गया है।' कुछ मामलों में कैदियों को कारावास की अधिकतम अवधि बीत जाने के बाद भी जेल में बंद रखा गया है जिसके लिए उन्हें सजा दी गई थी। यह मानवाधिकार का गंभीर उल्लंघन है। कानून मंत्री डा0 एम0 वीरप्पा मोइली ने 31 जुलाई 2010 तक 2 लाख कैदियों को छोड़ने का वादा किया था। यद्यपि इस वादे के क्रियान्वयन के बारे में कोई भी ब्यौरा उपलब्ध नहीं है। तिहाड़ जेल के कैदियों का आँकड़ा दर्शाता है कि मंत्री के वादे का कोई भी प्रभाव नहीं पड़ा।

जेलों में ज्यादा विचाराधीन कैदियों को रखना हमारी न्यायपालिका में बहुत कम दोषसिद्धि दर के बावजूद अनुचित है। उदाहरण के तौर पर मुंबई में दिसंबर 2010 तक 1.41 लाख विचाराधीन मामले थे और वर्ष 2011 में 20,725 मामलों को विचारण के लिए भेजा गया था। वर्ष 2011 में निपटाए गए 12,296 मामलों में से केवल 2,082 मामलों (अर्थात 17 प्रतिशत) में दोष सिद्ध हुआ। हत्या, बलात्कार, गंभीर क्षति, अपहरण, बलात्कार हरण आदि से संबंधित अपराध की गंभीर श्रेणी में दोषसिद्धि दर केवल 10 प्रतिशत ही है। कम और इसके अतिरिक्त गिरती हुई दोषसिद्धि दर देश में गंभीर चिंता का विषय है। ज्यादा लंबन और विचाराधीन मामलों की ज्यादा संख्या का दूसरा भय उत्पन्न करने वाला परिणाम जेलों में बढ़ती हुई भीड़ है। मीडिया में कई रिपोर्टों के अनुसार औसतन दो कैदियों के लिए चिह्नित जगह में तीन व्यक्तियों को रखा गया। इस प्रकार से यह मानवाधिकार के उल्लंघन का दूसरा रूप है।

भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार दूसरी समस्या है जो न्यायपालिका की साख को दांव पर रख सकती है। इसकी केवल निगरानी ही नहीं करने की आवश्यकता है; यह पदोन्नति, पश्च सेवानिवृत्ति नियुक्ति आदि से जुड़ा हो सकता है। हाल के सालों में मुख्य भ्रष्टाचार समाचार दो न्यायाधीशों– जस्टिस पाल डैनियल दिनाकरन प्रेमकुमार और जस्टिस सौमित्र सेन से संबंधित हैं। दोनों न्यायाधीश एक सामान्य रास्ताः इस्तीफा को अख्तियार करते हुए वर्ष 2011 में संसदीय जाँच, दोषी साबित होने और संभावित महाभियोग से बच गए। जबकि जस्टिस दिनाकरन के विरुद्ध पूछताछ समिति उनके इस्तीफा देने के कारण बीच में ही समाप्त कर दी गई; न्यायाधीश (जाँच) अधिनियम, 1968 के अंतर्गत जस्टिस सेन के विरुद्ध पूछताछ समिति की रिपोर्ट में उनके द्वारा दुराचार के दो आधार पाए गए। 30 अप्रैल, 1984 से दिसंबर 2006 की लंबी अवधि के दौरान कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त 'रिसीवर' के रूप में उनके द्वारा प्राप्त की गई बहुत बड़ी धनराशि का गबन और इस गबन के संबंध में कलकत्ता उच्च न्यायालय के समक्ष तथ्यों की गलतबयानी। लोकसभा में जस्टिस सेन के विरुद्ध प्रस्ताव उनके इस्तीफे के बाद प्रस्तुत नहीं किया गया।

न्यायपालिका में एक विचित्र भ्रष्टाचार का मामला हाल के महीनों में प्रकाश में आया। यह श्री गली जनार्दन की जमानत का घोटाला था। श्री रेड्डी, जो ओबुलपुरम खनन कंपनी के मालिक थे, हजारों करोड़ रुपये के अवैध खनन में कथित तौर पर शामिल थे। उन्हें केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) द्वारा गिरफ्तार किया। उन्होंने केवल अपनी ही नहीं बल्कि इस घोटाले में शामिल अन्य सभी अधिकारियों की जमानत प्राप्त कर ली। इस 'बिक्री के लिए जमानत' घोटाले में कई उपद्रवी शीटर्स, राज्य मंत्री, पीठासीन न्यायाधीश, भूतपूर्व न्यायाधीश, वकील शामिल थे। गली जनार्दन रेड्डी द्वारा सीबाआई के विशेष न्यायालय के जज टी पत्ताभिराम राव के साथ केवल अपनी जमानत ही नहीं बल्कि ओबुलपुरम मामले में गिरफ्तार अन्या व्यक्तियों के लिए भी जमानत प्राप्त करने के लिए 60 करोड़ रूपये की स्पष्ट रूप से पैकेज डील की गई। सीबीआई अब दावा कर रही है कि उसके पास इस केस में राजनीतिज्ञों से लेकर जजों, वकीलों, छोटे–मोटे उपद्रवी शीटर्स की भागीदारी को साबित करने के लिए आडियो रिकार्डिंग और यहाँ तक कि वीडियो फुटेज भी है। उस जज को उसके साथ साजिश में शामिल कुछ अन्य व्यक्तियों को तुरंत हिरासत में ले लिया गया था।

आश्चर्यजनक कार्यप्रणालियाँ और फैसले

न्यायपालिका में प्रत्यक्ष भ्रष्टाचार के बारे में सार्वजनिक डोमेन में ज्यादा साक्ष्य नहीं है। यद्यपि न्यायपालिका में कुछ कार्य जिनमें भ्रष्टाचार के संभावित संकेत हो सकते हैं वे बिल्कुल सामान्य हैं। इनमें जजों के अपने न्यायालयों में सगे–संबंधी, विरोधात्मक निर्णय आदि शामिल हैं। विरोधात्मक निर्णय भारतीय न्यायपालिका में बिल्कुल सामान्य हैं और सामान्य व्यक्तियों के लिए एक बड़ी पहेली हैं। विरोधात्मक निर्णय वास्तव में खराब नहीं हैं। यद्यपि इन्हें न्यायपालिका में सही नियंत्रण और संतुलन के रूप में माना जा सकता है। लेकिन उन्हें नियम के बजाए एक अपवाद होना प्रत्याशित है। यद्यपि भारत में कई विरोधात्मक और अप्रत्याशित निर्णय होते हैं। इस रिपोर्ट में कुछ निर्णयों के उदाहरण दिए गए हैं। यहाँ तक कि उच्च पदों पर बैठे कुछ व्यक्ति भी कुछ निर्णयों पर निराश हुए हैं। उदाहरण के तौर पर, पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री सुश्री ममता बनर्जी ने कहा कि न्यायपालिका का एक वर्ग भ्रष्ट है, उन्होंने दावा किया कि ऐसी कुछ घटनाएँ हैं जिसमें न्यायालय का निर्णय पैसे के लिए किया गया है। राज्य सभा में विरोधी दल के नेता और भूतपूर्व कानून मंत्री अरुन जेटली ने भी बताया कि 'न्यायाधीशों के बीच में सेवानिवृत्त होने के बाद रोजागार का अवसर न्यायपालिका की निष्पक्षता को प्रभावित कर रहा है।' उन्होंने उन सेवानिवृत्त न्यायाधीशों के समक्ष दो वर्ष के विराम काल के लिए भी जोर दिया जो न्यायाधिकरण और आयोग के लिए नियुक्त किए जाते हैं। भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायमूर्ति जस्टिस जे0एस0 वर्मा ने भी सेवानिवृत्ति के बाद सरकारी रोजगार के अवसर के प्रलोभन में न्यायाधीशों का फंसना न्यायिक स्वतंत्रता के लिए खतरा बताया।

अनुचित हस्तक्षेप

न्यायपालिका में अनुचित देरी का एक मुख्य कारक उन मामलों में उच्च न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप किया जाना है जो अधीनस्थ न्यायालयों में विचाराधीन हैं। इस प्रकार के कार्य निचली अदालतों की कार्यवाहियों को महत्वपूर्ण रूप से विलंब कर देते हैं यदि वे उन्हें पटरी से नहीं उतारते हैं। सामान्यतया धनी और शक्तिशाली व्यक्ति उच्च अदालतों का हस्तक्षेप प्राप्त कर लेते हैं। नुकसान विशेष रूप से गरीब और उपेक्षित वर्ग का तथा पूर्ण रूप से न्यायपालिका का होता है। एक हाल के निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने परीक्षण और पारिवारिक न्यायालय के कार्यों में उच्च अदालतों के हस्तक्षेपों पर अपनी चिंता व्यक्त की।

लगातार स्थगन

यह किसी मामले के अंतिम निपटान में देरी का दूसरा कारण है। लगातार स्थगन न्यायालय की कार्यवाहियों में प्रायः अच्छे कारणों के लिए प्राप्त नहीं किए जाते हैं। यद्यपि सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में कहा गया है कि न्यायालय किसी भी साक्ष्य के लिए किसी पक्ष को तीन से ज्यादा स्थगन प्रदान कर सकती है लेकिन इसके लिए न्यायोचित कारण होना चाहिए। क्या न्यायोचित कारण है, यह महत्वपूर्ण प्रश्न बन गया है। वर्ष 2011 में उच्चतम न्यायालय ने इस मामले पर स्थिति को साफ ढंग से स्पष्ट किया है। यह स्थिति आज इतनी अनियंत्रित हो गई है कि उच्चतम न्यायालय यह कहने के लिए मजबूर हो गया है कि 'स्थगन कैंसर की तरह बढ़ा है और न्याय वितरण प्रणाली के पूरे निकाय को क्षीण कर रहा है।' यह उल्लेखनीय है कि उच्च न्यायालय द्वारा लगातार हस्तक्षेप भी कई अनुचित स्थगन को बढ़ावा देता है। इससे महत्वपूर्ण रूप से मुकदमे की लागत भी बढ़ जाती है जो न्याय के लिए न्यायपालिका तक पहुँचने से गरीब को रोकती है।

अगला कार्यक्रम

उच्चतम न्यायालय का हाल का कथन कि 'हमारी कानून व्यवस्था ने अपराधियों के लिए जीवन बहुत ही आसान और कानून को मानने वाले नागरिकों के लिए बहुत ही कठिन बना दिया है' समुचित रूप से देश में न्यायपालिक की वर्तमान स्थिति को दर्शाता है। इन चुनौतियों से निपटने के

लिए न्यायपालिका को अपने घर को व्यवस्थित करने की आवश्यकता है। कई चुनौतियाँ व्यवस्था के अंदर ही हैं और आंतरिक सुधार की आवश्यकता है। उपरोक्त विश्लेषण स्पष्ट है और आंतरिक सुधारों के लिए कई उपयोगी जानकारी प्रदान करता है।

स्थानीय स्वशासनः लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण और समावेशन

इस भाग में स्थानीय शासी निकायों (LGBs) और विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया को मजबूत करने में राज्य सरकारों के प्रदर्शन, स्थानीय निकायों के चुनाव के संबंध में हाल के मुख्य विकास, निधियों, कार्यों और अधिकारियों (3Fs) का हस्तांतरण और राज्य वित्त आयोग की स्थिति पर चर्चा की गई है। इसमें पंचायती राज संस्थाओं (PRIs)को मजबूत करने में भारत सरकार/ पंचायती राज मंत्रालय के हाल के प्रयासों, हाल के वर्षों में स्थानीय स्वशासन की मुख्य उपलब्धि, विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया में मामले और चुनौतियों का भी वर्णन किया गया है। इस भाग में कई सिफारिशें की गई हैं। अंततः इसमें जवाहरलाल नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण मिशन (JNNURM) के केस अध्ययन द्वारा शहरी शासन के मामलों की भी चर्चा की गई है।

स्थानीय निकायों के संबंध में राज्य सरकारों का प्रदर्शन

राज्य सरकार को नियमित रूप से चुनाव के आयोजन, अधिकारों का हस्तांतरण और निधियों के स्थानांतरण द्वारा विकेंद्रीकरण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी होती है।

चुनाव

प्रायः राज्य सरकारें नई संस्थाओं को स्थापित करने में सक्रिय रही हैं। जैसा 73वें और 74वें संविधान संशोधन में सुझाव दिया गया है, सभी राज्य राज्य चुनाव आयोग (SECs) की स्थापना करते हैं। यद्यपि राज्य चुनाव आयोग को निर्धारित हैसियत, जिम्मेदारी और अधिकार विभिन्न राज्यों में महत्वपूर्ण रूप से अलग–अलग होते हैं और अतः राज्य चुनाव आयोग की अपने संबंधित राज्य सरकार के साथ कार्य संबंध भी अलग–अलग होता है। वर्ष 2013 में तीन राज्यों यानी कर्नाटक, पश्चिम बंगाल और आंध्र प्रदेश ने स्थानीय निकायों के लिए चुनाव आयोजित किया। सभी तीन राज्यों में न्यायालयों को निर्णय करना था।

महिलाओं के लिए आरक्षण तथा अन्य उपाय

भारत के संविधान के प्रावधानों के अनुसार सभी राज्यों को प्रत्येक स्तर पर अध्यक्षों की सीटों और पदों की कुल संख्या का एक–तिहाई महिलाओं के लिए आरक्षित रखना होता है। हाल के वर्षों में कई राज्यों ने स्थानीय निकायों में महिलाओं के लिए 5 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया है। कई राज्यों ने संभावित उम्मीदवारों के लिए कुछ प्रगतिशील मापदंड शुरू किए हैं जैसे उन लोगों को चुनाव लड़ने से रोकना जिनके पास दो बच्चे हैं (राजस्थान) और उनके घरों में व्यक्तिगत शौचालय नहीं हैं (महाराष्ट्र)। गुजरात उन मतदाताओं को दोषी घोषित करने की हद तक पहुँच गया है जिन्होंने स्थानीय चुनावों में मतदान नहीं किया है। मध्यप्रदेश और केरल ने निर्वाचित प्रतिनिधियों को वापस बुलाने के प्रावधान किए हैं। गुजरात उन पंचायतों को वित्तीय प्रोत्साहन देता है जिन्होंने अपने अध्यक्षों/ सरपंचों को सर्वसम्मति से चुना है। यद्यपि इस प्रकार के प्रगतिशील लेकिन अपवर्जनात्मक मापदंड राज्य विधानसभाओं तथा संसद के सदस्यों के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

अधिकारों का स्थानांतरण

73वें संविधान संशोधन अधिनियम (CAA) के संबंध में राज्य सरकारों को 29 विषयों से संबंधित 3Fs को स्थानांतरित करना है। लेकिन किसी भी राज्य ने सभी 29 निर्धारित विषयों में 3Fs को स्थानांतरित नहीं किया है। यद्यपि कुछ मामलों में कार्यों का स्थानांतरण किया गया है, ऐसे विकास कागज पर ही हैं और जमीनी स्तर पर उन्हें नहीं किया गया है। 3Fs में कार्यों को ज्यादा उदारतापूर्वक स्थानांतरित किया गया है और कार्यकर्ताओं को कम स्थानांतरित किया गया है।

राज्य वित्त आयोग

73वें और 74वें संविधान संशोधन अधिनियमों के अनुसार सभी राज्यों को स्थानीय स्वशासन की वित्त व्यवस्था को मजबूत करने के लिए प्रत्येक पाँच वर्ष पर राज्य वित्त आयोग को स्थापित करना होता है। क्योंकि संविधान संशोधन अधिनियम 20 साल पहले संचालित हुआ था, यह अनुमान है कि प्रत्येक राज्य ने इस समय तक चौथे राज्य वित्त आयोग का गठन किया होगा। यद्यपि 28 राज्यों में से केवल सात राज्यों ने चौथे राज्य वित्त आयोग का गठन किया है और 11 राज्यों ने तीसरे वित्त आयोग का गठन किया है। जम्मू एवं काश्मीर तथा नागालैंड ने अपने पहले राज्य वित्त आयोग का गठन किया। झारखंड को अभी भी पहले राज्य वित्त आयोग का गठन करना है। अन्य मामले जहाँ राज्य वित्त आयोग कार्यशील हैं, स्थानीय शासी निकायों को वित्त की व्यवस्था करने, राज्य वित्त आयोग की रिपोर्टों को अंतिम रूप देने, कार्यवाही रिपोर्ट तैयार करने में देरी और उन्हें कार्यान्वित करने में देरी हैं। चूँकि राज्य वित्त आयोग की स्थानीय शासी निकायों के बीच निधियों को वितरित करने की प्रारंभिक जिम्मेदारी होती है उनकी अनुपस्थिति प्रत्यक्ष रूप से स्थानीय निकायों की वित्तीय क्षमता को प्रभावित करती है। तेरहवें वित्त आयोग (FC-XIII) ने अवलोकन किया कि 'राज्य वित्त आयोग की रिपोर्ट की गुणवत्ता विचित्र है। इसके अतिरिक्त राज्य वित्त आयोग की सिफारिशें एकरूप ढाँचे का अनुसरण नहीं करती हैं, अतः वे अपनी उपयोगिता को कम कर रही हैं।' इसने पुनः अवलोकन किया कि 'राज्य वित्त आयोग का अनुभव कई कारणों से सफल नहीं पाया गया है।'

जिला/स्थानीय स्तरीय योजना

जिला योजना समिति, कार्यों और अधिकार से अपर्याप्त रूप से सुसज्जित होने के साथ ही अपर्याप्त क्षमताओं तथा योजना कौशल से ग्रस्त है। विकेंद्रीकृत योजना को असफल कहते हुए मणि शंकर अय्यर समिति ने अवलोकन किया कि 'विकेंद्रीकृत योजना की असफलता से सीखी जाने वाली मुख्य सीख यह है कि योजना तथा आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक दशाओं के लिए स्थानीय क्षमता की व्यापक विविधता के साथ सभी राज्यों के लिए सार्वत्रिक रूप से वैध सर्वोत्कृष्ट प्रक्रिया नहीं हो सकती है।' समिति सिफारिश करती है कि राज्यों को पेश किए गए योजना विकल्पों का एक मीनू होना जरूरी है (भारत सरकार, 2013)।

स्थानीय/ जिला योजना की दूसरी ढाँचागत कमजोरी किसी विशेष जिले के अंतर्गत ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के योजना निकायों के बीच समन्वय की कमी है। स्थानी शासन पर अपनी रिपोर्ट में द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (SARC) ने क्रमशः ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्रों में वर्तमान योजना समितियों और मेट्रोपालिटन योजना समितियों की जगह जिला योजना परिषदों को स्थापित करने की सिफारिश की। यद्यपि भारत सरकार ने इस सिफारिश को रद्द कर दिया है (भारत सरकार, दिनांकरहित)।

पंचायत राज मंत्रालय का प्रदर्शन

पंचायत राज मंत्रालय के प्रदर्शन की समीक्षा में इस भाग में केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं (CSSs) को पुनः डिजाइन करने के मामलों, स्थानीय शासी निकायों के लिए निधियों का स्थानांतरण, राज्य सरकारों को प्रोत्साहन और स्थानीय शासी निकायों के क्षमता निर्माण पर चर्चा की गई है।

केंद्रीय मंत्रालयों/ विभागों के साथ इंटरफेस

प्रचलित धारणा यह है कि 'विकेंद्रीकरण' और 'स्थानीय शासी निकाय' राज्य के विषय हैं और राज्य सरकारें स्थानीय शासी निकायों के मामलों की वर्तमान स्थिति के लिए जिम्मेदार हैं। यद्यपि मणि शंकर अय्यर समिति ने यह बताया कि यह केंद्र सरकार है जो ₹2,50,000 से ज्यादा वित्त की व्यवस्था करने के बावजूद केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं में पंचायती राज संस्थाओं की केंद्रीयता को सुनिश्चित करने में असफल रही। कई वर्षों से पंचायती राज मंत्रालय ने केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं को पुनः डिजाइन करने के लिए कैबिनेट सचिवालय द्वारा विविध केंद्रीय मंत्रालयों/ विभागों

का अनुसरण किया लेकिन यह पाया कि मंत्रालयों/ विभागों को गतिहीन पाया। समिति ने बताया कि, 'पंचायती राज मंत्रालय चल नहीं सकता और कैबिनेट नहीं चलेगा। मामला वहीं का वहीं है।'

24 अप्रैल, 2013 को राष्ट्रीय पंचायत राज दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री की टिप्पणी कि 'नौकरशाही पंचायतों को नीचे गिरा रही है', अन्य मंत्रालयों/ विभागों के साथ पर्याप्त समन्वयन स्थापित करने में पंचायत राज मंत्रालय की असफलता को साबित करती है। पंचायत राज मंत्रालय की असफलता केवल पंचायती राज संस्थाओं को अपनी विधि सम्मत भूमिका और प्राधिकार से वंचित ही नहीं कर रही है बल्कि केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं और अन्य जमीनी स्तर पर विकास कार्यक्रमों द्वारा खर्च किए जा रहे लाख करोड़ों रुपए के प्रयोग में संपूर्ण अकुशलता का परिणाम भी है।

केंद्रीय निधियों का स्थानांतरण

पंचायती राज मंत्रालय पंचायती राज संस्थाओं के कार्य को व्यक्त करने तथा स्थानीय शासी निकायों की निधियों के उचित स्तर को आवंटित करने के लिए वित्त आयोग को प्रभावित करने में भी असफल रहा है। वित्त आयोग–X, XI और XII ने विभिन्न कारणों का हवाला देते हुए स्थानीय शासी निकायों के तदर्थ अनुदान की सिफारिश की। वित्त आयोग–XIII ने पहली बार स्थानीय शासी निकायों के लिए विशेष हिस्से की सिफारिश की। इसने मूल अनुदान के रूप में विभाज्य पूल के 1.5 प्रतिशत तथा 0.5 प्रतिशत से ज्यादा राशि को स्थानीय शासी निकायों के लिए प्रदर्शन और विशेष क्षेत्र अनुदान के रूप में सिफारिश की। इन सिफारिशों के साथ स्थानी शासी निकायों को संवैधानिक ढाँचे में समन्वित कर लिया गया। वर्ष 2010–11 से शुरू करते हुए 5 वर्ष की अवधि के लिए स्थानीय शासी निकायों के लिए वित्त आयोग–XIII की अनुमानित राशि ₹87,519 करोड़ है। वास्तविक आवंटन राशि वर्ष 2010–11 में अनुमानित राशि से लगभग 29 प्रतिशत कम तथा वर्ष 2011–12 में अनुमानित राशि से लगभग 22 प्रतिशत कम थी। इसके अतिरिक्त, वर्ष 2011–12 में जारी की गई वास्तविक राशि आवंटित राशि की अपेक्षा 18 प्रतिशत कम थी। लगभग 2.5 लाख स्थानीय शासी निकायों के लिए वर्ष 2010–11 में ₹5,799.3 करोड़ तथा वर्ष 2011–12 में ₹9,963.9 करोड़ का आवंटन स्थानीय क्षेत्र विकास (LAD) कार्यक्रम के अंतर्गत लगभग 800 सांसदों (जेब खर्च के रूप में) को आवंटित लगभग ₹4,000 करोड़ प्रतिवर्ष की तुलना में बहुत कम दिखाई देता है। प्रायः स्थानीय शासी निकायों के पास निर्वाचित प्रतिनिधियों को वेतन और भत्ता प्रदान करने के लिए फंड नहीं होता है।

राज्य सरकारों को प्रोत्साहन

पंचायती राज मंत्रालय राज्य सरकारों को प्रोत्साहित करने में भी अप्रभावी रहा है। जैसी ऊपर चर्चा की गई है, 3FRs के हस्तांतरण के संबंध में राज्य सरकारों का प्रदर्शन संतोषप्रद नहीं है। यद्यपि पंचायती राज मंत्रालय के पास राज्य सरकारों को प्रभावित करने के लिए कुछ रुचिकर कार्यक्रम हैं ताकि वे स्थानीय शासी निकायों को ज्यादा अधिकार और संसाधन हस्तांरित कर सकें और इन निकायों को मजबूत कर सकें। इन कार्यक्रमों में पंचायत सशक्तीकरण और जवाबदेही प्रोत्साहन योजना (PEAIS), पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि (BRGF), सर्वश्रेष्ठ कार्य केस अध्ययन, क्षमता निर्माण कार्यक्रम आदि शामिल हैं।

पंचायत सशक्तीकरण एवं जवाबदेही प्रोत्साहन योजना

PEAIS की शुरूआत वर्ष 2005–06 में पंचायती राज मंत्रालय द्वारा राज्यों को पंचायतों के लिए 3Fs के हस्तांतरण के लिए प्रोत्साहित करने तथा पंचायतों को अपनी कार्यपद्धतियों को पारदर्शी और दक्ष बनाने के लिए जवाबदेही व्यवस्था को स्थापित करने के लिए की गई। इस योजना के अंतर्गत राज्यों को दो हस्तांतरण सूचकांकों (DIs), अर्थात संचयी हस्तांतरण सूचकांक (CDI) और वृद्धिशील हस्तांतरण सूचकांक (IDI) की दो श्रेणियों के अंतर्गत रखा गया है। महाराष्ट्र, केरल, कर्नाटक और राजस्थान को CDI उस क्रम के अंतर्गत पुरस्कार प्राप्त हुआ है। IDI के अंतर्गत कर्नाटक ने राजस्थान, महाराष्ट्र और ओडिशा के साथ उसी क्रम

में शीर्ष पद/ पुरस्कार प्राप्त किया। लेकिन सूचक के मानों पर सरसरी नजर डालने पर निराशाजनक स्थिति प्रकट होती है। 73वें और 74वें संशोधनों के 20 वर्ष होने तथा PEAIS के आठ वर्ष के बाद भी CDI का राष्ट्रीय औसत केवल 38.52 प्रतिशत ही है। केवल दो राज्यों ने 60 से ज्यादा प्रतिशत प्राप्त किए हैं और अन्य तीन राज्यों ने 50 और 60 के बीच का प्रतिशत प्राप्त किए हैं। IDI से संबंधित स्थिति ज्यादा चिंताजनक है। केवल 10 राज्यों ने IDI तैयारी को समझते हुए पहल की है। इन 10 राज्यों में चिह्नित भिन्नता है। मूल्य सूचकांक 3.33 से 50.83 के बीच है। केवल कर्नाटक के पास 50 मूल्य सूचकांक है। आठ वर्षों के बाद भी, कम मूल्य सूचकांक यह बताता है कि PEAIS सफल नहीं है। पुरस्कार राशि राज्य सरकार के लिए कम प्रोत्साहन हो सकती है। इसके अतिरिक्त, राज्य सरकारें उसी तरह कार्य करती हैं जिस प्रकार केंद्र सरकार, अर्थात राज्य द्वारा प्रायोजित योजनाओं (SSSs) पर फोकस और SSSs को क्रियान्वित करने के लिए समानांतर निकायों का सृजन। दूसरे शब्दों में राज्य भी संसाधनों और प्राधिकार के केंद्रीकरण पर फोकस करते हैं।

क्षमता निर्माण

निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा कार्यकर्ताओं का क्षमता निर्माण पंचायती राज मंत्रालय का मुख्य कार्य है। क्षमता निर्माण में ढाँचा, साफ्टवेयर, आवेदन, प्रशिक्षण माड्यूल और साहित्य प्रदान करना भी शामिल है। निर्वाचित प्रतिनिधियों तथा कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए पंचायती राज मंत्रालय के पास दो मुख्य कार्यक्रम हैं। दोनों कार्यक्रमों के अंतर्गत निधि के आवंटन, जारी और प्रयोग पर उपलब्ध आँकड़े दर्शाते हैं कि राज्य उपयोगिता रिपोर्ट को समय से प्रस्तुत करने में असफल रहता है। दूसरी निधि उपयोग से संबंधित गंभीर समस्या पंचायती राज मंत्रालय द्वारा निधियों को जारी करने में देरी है उदाहरण के तौर पर, वर्ष 2012–13 में BRGF के अंतर्गत ₹272 करोड़ हकदारी में से केवल ₹39. 23 करोड़ ही फरवरी 2013 तक जारी किए गए थे अर्थात इस वित्तीय वर्ष के अंतिम महीने तक लगभग 86 प्रतिशत निधियों को जारी किया जाना था। इस समय पर निधियों को निर्धारित उद्देश्य से मोड़ा जा सकता है।

प्रशिक्षण कार्यक्रम में गुणवत्ता और औचित्य के अन्य गंभीर मामले हैं। प्रशिक्षण अल्पविकसित चरणों में संचालित किए जाते हैं और इनमें पर्याप्त सुधार की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त निर्वाचित प्रतिनिधियों के मौजूदा प्रबंधकीय दक्षताओं तथा संभावनाओं के निर्माण पर फोकस करने के बजाए प्रशिक्षण कार्यक्रम में विदेशी कौशल और प्रथाओं को प्रदान करने पर फोकस किया जाता रहा है। इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रचुर और स्थानीय रूप से प्रकट कौशल और अभ्यासों को केंद्रीय रूप से विकसित और मानकीकृत कौशलों और अभ्यासों में बदले जाने की मांग की गई है। अय्यर समिति ने संकेत किया कि क्षमता निर्माण कार्यक्रम में बदलाव की आवश्यकता है। इसे कम मूल्य और आपूर्ति संचालित से प्रभावी, अपनाने योग्य और मांग संचालित ज्ञान समर्थन साधन में बदलना है। वर्तमान प्रशिक्षण कार्यक्रमों के साथ दूसरा मामला यह है कि वे अत्यधिक रूप से पंचायती राज संस्थाओं की कार्यान्वयन भूमिका विशेष रूप से केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के कार्यान्वयन पर फोकस कर रहे हैं।

पंचायती राज मंत्रालय कई अनुप्रयोगों के विकास और प्रयोग को भी समर्थन देता है जिसमें साफ्टवेयर और टेंपलेट शामिल हैं। यद्यपि कई निर्वाचित प्रतिनिधियों को इस प्रकार की विदेशी और उच्च तकनीकी युक्त प्रणाली में दक्ष होने और इसका प्रयोग करने में कठिनाई होती है। अधिकारियों पर उनकी निर्भरता इस प्रकार की नई और उच्च तकनीक युक्त कार्यों और प्रणालियों के साथ बढ़ सकती है। आगे ग्राम सभाएँ इस प्रकार की विदेशी तकनीकों और कार्यों के साथ ग्राम पंचायतों को नियंत्रित करने में सक्षम नहीं हो सकती हैं।

स्थानीय शासी निकायों की मुख्य उपलब्धियाँ

स्थानीय शासी निकायों की उपलब्धियों पर इस भाग में कई स्रोतों से स्थानीय शासी निकायों की बड़ी संख्या में संभावनाओं तथा लाभों को सूचित किया गया है। लाभ में समावेशी वृद्धि के लक्ष्य की प्राप्ति, शासन में व्यापक लोकप्रिय भागीदारी, महिलाओं तथा कमजोर वर्गों की भागीदारी, आवश्यकता आधारित विकास, स्वेच्छावाद, पारस्परिक सीख, साफ पर्यावरण, नवाचारों की शुरूआत, सरकारी कार्यक्रमों का अभिसरण, सृजित संपत्तियों का स्वामित्व महसूस होना, मौजूदा आजीविका पर निर्माण, आपातकाल और आपदाओं के समय में सही समय पर प्रतिक्रिया आदि शामिल हैं। एक तिहाई से आधे आरक्षण के कारण विभिन्न वर्गों और पृष्ठभूमि से महिलाएँ अपनी कार्यक्षमता को समझ रही हैं और अपने गाँवों, संस्थाओं तथा समुदायों के फायदे के लिए अधिकतापूर्वक योगदान कर रही हैं। महिला निर्वाचित प्रतिनिधियों (WERs) का बेहतर प्रदर्शन महिला आरक्षण विधेयक को पारित करने के लिए सम्मोहक कारण था जो संसद में लगभग दो दशकों से विचाराधीन था। निर्वाचित प्रतिनिधियों के अच्छे प्रदर्शन के बीच उनके शैक्षिक स्तरों के साथ सकारात्मक पारस्परिक संबंध देश में बहुप्रतीक्षित राजनीतिक सुधारों के लिए एक उपयोगी पैठ हो सकता है। पंचायती राज संस्थाएँ विभिन्न स्रोतों से पर्याप्त संसाधनों को लामबंद करने में सक्षम हैं जिसमें गाँव के लोगों से स्वैच्छिक योगदान शामिल है। कुमिली ग्राम पंचायत वर्ष 2004–05 में लगभग रु0 3 मिलियन से पाँच वर्षों में रु0 13 मिलियन से भी ज्यादा स्वयं के स्रोत से राजस्व उत्पन्न करने में सक्षम थी। ग्राम पंचायत ने अपने स्वयं के स्रोत से राजस्व उत्पन्न करने में दो साधन पारदर्शिता और प्रोत्साहन नियुक्त किए। पारदर्शिता का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण स्थानीय शासी निकायों में देखा जा सकता है।

मामले और चुनौतियाँ

भारत सरकार, राज्य, स्थानीय शासी निकायों के स्तरों पर तथा सामान्य स्तर के मामलों और चुनौतियों की इस भाग में चर्चा की गई है।

केंद्र सरकार के स्तर पर मामले और चुनौतियाँ

केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं को पुनः डिजाइन करने में दोष के अलावा भारत सरकार वित्त आयोग द्वारा स्थानीय शासी निकायों को आवश्यक निधि को स्थानांतरित करने में भी असफल रही। इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (SARC) की महत्वपूर्ण सिफारिशों को रद्द कर दिया जो स्थानीय शासी निकायों को मजबूत बनाने और नौकरशाही से निर्वाचित प्रतिनिधियों को अधिकार संतुलन को ठीक करने के लिए थीं। केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के साथ दूसरा मामला यह है कि राज्यों के बीच निधियों का आवंटन प्रायः राजनीतिक जुड़ाव और विचारों द्वारा प्रभावित होता है।

भारत सरकार संसाधनों के बड़े हिस्से को अधिकतर बरकरार रखती है। परिणामस्वरूप विकास प्राथमिकताएँ विकृत हो रही हैं और संसाधनों का प्रयोग करने में दक्षता में कमी आ रही है। प्रधानमंत्री की 24 अप्रैल 2013 को पंचायत दिवस कार्यक्रम में टिप्पणी कि 'नौकरशाही स्थानीय शासी निकायों को नीचे गिरा रही है' नौकरशाही और निर्वाचित प्रतिनिधियों के बीच सत्ता समीकरण की अवस्था को दर्शाती है। विवादास्पद प्रश्न यह है कि यदि प्रधानमंत्री इस समस्या का समाधान नहीं कर सकते हैं तो कौन करेगा?

राज्य स्तर पर मामले और चुनौतियाँ

भारत सरकार के कई मंत्रालयों और विभागों द्वारा जारी किए गए दिशानिर्देशों के अनुसार केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं को कार्यान्वित करने के अलावा राज्य सरकारों को अपनी स्वयं की राज्य द्वारा प्रायोजित योजनाओं (SSSs) का कार्यान्वयन करना होता है। यह बहुत ज्यादा स्पष्ट है कि इन राज्य द्वारा प्रायोजित योजनाओं के अंतर्गत स्थानीय शासी निकायों को निधियों का आवंटन राजनीतिक

जुड़ाव द्वारा प्रभावित होता है। राज्य स्तर पर दूसरा मामला राज्य सरकारों तथा SECs के बीच विरोध है।

कार्यकर्ताओं का स्थानांतरण दूसरा नाजुक मामला है जिसको पुनः देखने की आवश्यकता है। यदि कर्मचारी, जिनका भुगतान लाइन विभागों द्वारा किया जाता है, स्थानीय शासी निकायों के लिए तैनात किए जाते हैं तो वे स्थानीय शासी निकायों/ निर्वाचित प्रतिनिधियों पर हावी हो सकते हैं या उन्हें नियंत्रित कर सकते हैं। अतः इस प्रकार के स्थानांतरणों को केवल विनियामक सेवाओं जैसे लेखापरीक्षा तक ही सीमित रखा जा सकता है। स्थानीय शासी निकायों को अपने कर्मचारियों को नियुक्त करने और उनका भुगतान करने के लिए पर्याप्त संसाधनों से सशक्तीकृत किया जा सकता है।

स्थानीय शासी निकाय स्तर पर मामले और चुनौतियाँ

स्थानीय शासी निकाय स्तर पर इस भाग में चार मुख्य मामलों और चुनौतियों अर्थात कुलीन कब्जा, प्रतिगामी राजनीति, अदृश्य संस्थान और सरपंच राज को सूचित किया गया है। यद्यपि स्थानीय शासी निकायों में मामलों में महिलाओं तथा कमजोर वर्गों के लिए व्यापक आरक्षण, शैक्षिक और जागरूकता स्तर में वृद्धि, सक्रिय सिविल सोसायटी, व्यापक मीडिया कवरेज, न्यायिक सक्रियता आदि के कारण कमी आ रही है। कुलीन कब्जा और प्रतिगामी राजनीति भी राजवंश शासन और सांप्रदायिक राजनीति के रूप में राज्य और राष्ट्रीय राजनीति में प्रचलित है। चूँकि स्थानीय शासी निकायों को मुख्य रूप से केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं और राज्य द्वारा प्रायोजित योजनाओं के लिए कार्यान्वयन एजेंसियों के रूप में सीमित कर दिया गया है, वे लाइन विभागों के प्रति ज्यादा जिम्मेदार और स्थानीय लोगों के प्रति कम जिम्मेदार हो रही हैं और ये अदृश्य और सरपंच राज संस्थाओं में बदल रही हैं।

अगला कार्यक्रम

आगे इस भाग में संविधान के अनुसार स्थानीय शासी निकायों को कार्य तथा अधिकार प्रदान करते हुए सशक्तीकरण की अविवादित आवश्यकता को दर्शाया गया है। केंद्र सरकार उन स्थानों पर अपनी केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं को पुनः डिजाइन कर सकती है जहाँ पर स्थानीय शासी निकायों को केंद्रीय स्थान प्राप्त है। केंद्र सरकार को अपनी तरफ से प्रशासनिक प्रक्रिया को सख्त भी करना चाहिए क्योंकि यह समय पर निधियों को वितरित करने में प्रायः असफल रहती है। केंद्र सरकार को यह सुनिश्चित करने की भी आवश्यकता है कि उन विविध मंत्रालयों ओर विभागों के बीच आवश्यक समन्वयन स्थापित किया जाए जो एक या दूसरी तरह से स्थानीय शासी निकायों से जुड़े हैं। राजनीतिक तनावों के बावजूद केंद्र एवं राज्य सरकार के बीच इन मामलों पर आम राय होनी जरूरी है। अच्छे कार्यों के सैंकड़ों केस अध्ययन यह सुझाव देते हैं कि स्थानीय शासी निकाय ने काफी प्रभावशाली प्रदर्शन किया है यदि उन्हें स्वयं कार्य करने की स्वतंत्रता प्रदान की जाए। यद्यपि शीर्ष से एकजुट प्रयास यह सुनिश्चित करने के लिए किया जाना है कि स्थानीय शासी निकायों को कार्य करने के लिए इस प्रकार की स्वतंत्रता और माहौल प्रदान किया जाए। भिन्न नीति समीक्षा ढाँचों की महत्वपूर्ण सिफारिशों जिसमें मणि शंकर अय्यर समिति, SARC और वित्त आयोग शामिल हैं, को अक्षरशः जितना जल्दी हो सके कार्यान्वित किया जाए। प्रदर्शन संबंधी अनुदानों तथा सूचक संबंधी रिलीज का कार्य किया जा सकता है। गरीब राज्य जिनके पास सामान्यतः खराब शासी ढाँचा होता है, वे प्रदर्शन संबंधी अनुदानों को प्रस्तुत करते समय बुरी तरह से प्रभावित हो सकते हैं। ऐसे राज्यों/ क्षेत्रों के लोग 'खराब शासन तथा संसाधन की कमी' की दोहरी समस्या से प्रभावित होंगे। स्थानीय शासी निकायों को सुधरने की अनुमति दी जा सकती है। वित्तीय वर्ष के अंदर निधियों के प्रयोग की वर्तमान परंपरा को खत्म किया जा सकता है। व्यय बजट को तीन से पाँच वर्षों के लिए मंजूर किया जा सकता है।

निम्नलिखित मामलों पर व्यापक चर्चा की आवश्यकता हैः

- आरक्षित सीटों का आवर्तन
- ग्राम पंचायत चुनावों में राजनीतिक दलों की सीधी भागीदारी
- सभी स्तरों पर निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए उचित वेतन
- ग्राम पंचायत स्थितियों के सर्वसम्मत चयन के लिए वर्तमान पुरस्कार व्यवस्था
- एक व्यक्ति विशेष स्तर के पद के लिए कितनी बार प्रतियोगिता कर सकता है इसकी उच्चतम सीमा
- विभिन्न स्तरों पर निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए शैक्षिक योग्यता
- SECs का समापन और भारत चुनाव आयोग को स्थानीय शासी निकायों का चुनाव आयोजित करने का कार्य सौंपना।

जेएनएनयूआरएम

जेएनएनयूआरएम के केस अध्ययन द्वारा इस भाग में केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के बारे में मामलों पर प्रकाश डाला गया है। केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाएँ अनुमानित स्तर पर आर्थिक और सामाजिक नतीजों को प्राप्त करने में ही असफल नहीं रही हैं बल्कि उन केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं में भी स्थानीय शासन को सुधारने में असफल रही हैं जिसमें स्थानीय शासन और शासी संस्थाओं को सुधारने का विशेष उद्देश्य मौजूद है। केंद्र द्वारा प्रायेाजित योजनाओं की एक विशेषता यह है कि उनकी सफलता या असफलता या उपयुक्तता की परवाह किए बिना खर्च किया जाता रहा है। जेएनएनयूआरएम के केस में भी यद्यपि यह परियोजना कई आधार पर असफल रही, फिर भी मिकिन्से समीक्षा अध्ययन और उच्च शक्ति विशेषज्ञ समिति (HPEC) ने केवल इस परियोजना को जारी रखने की ही सिफारिश नहीं की बल्कि महत्वपूर्ण रूप से इसके कार्यक्षेत्र के विस्तार की भी सिफारिश की। केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के साथ दूसरा मामला यह है कि राज्यों के बीच निधियों का आवंटन प्रायः राजनीतिक जुड़ाव और विचारों द्वारा प्रभावित होता है। विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत बिहार के लिए हाल ही में बढ़ाए गए आवंटन के लिए राज्य में बदलते राजनीतिक जुड़ावों को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

अगला कार्यक्रम

उपरोक्त स्पष्ट रूप से यह सुझाव देता है कि हमारी सभी सरकारी संस्थाएँ कई अंतर्निहित ढाँचागत बदलावों के कारण घटिया प्रदर्शन कर रही हैं। यह सत्ता में खराब व्यक्तियों के कारण नहीं हो सकता है लेकिन 'खराब व्यवस्था' या 'व्यवस्था में खामियों' के कारण हो सकता है जो देश में सभी स्तरों पर खराब शासन का परिणाम है। हमें हमारी सभी शासी संस्थाओं में व्यापक सुधार की आवश्यकता है जिसमं राजनीतिक दल भी शामिल हैं। आशा है कि यह रिपोर्ट इस प्रकार के सुधारों की शुरूआत करने में योगदान देगी।

नेशनल सोशल वाच गठबंधन सहयोगी

नेशनल सोशल वाच (NSW) एक शोध और सिफारिश संगठन है जो मुख्य शासी संस्थाओं की कार्यपद्धतियों और दक्षता, नागरिकों और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति उनकी वचनबद्धता की निगरानी करती है। नेशनल सोशल वाच गठबंधन के राष्ट्रीय सचिवालय के रूप में यह पूरे देश में फैली सिविल सोसायटी संस्थाओं तथा नागरिकों के एक विस्तृत नेटवर्क का संचालन करती है।

सहयोगी

अंतर्राष्ट्रीय सहयोगी

- सोशल वाच इंटरनेशनल (SWI)
- एशियन नेटवर्क फॉर फ्री इलेक्शंस (ANFREL)

राष्ट्रीय सहयोगी

- युवा और सामाजिक विकास केंद्र (CYSD)
- बजट एवं शासन जवाबदेही केंद्र (CBGA)
- सामाजिक एवं कृषि विकास दक्षिण एशियाई नेटवर्क (SANSAD)
- लोकतांत्रिक सुधार संघ (ADR)
- PRS विधायी अनुसंधान
- समर्थन– विकास समर्थन केंद्र
- राष्ट्रीय सिफारिश अध्ययन केंद्र (NCAS)
- वादा ना तोड़ो अभियान (WNTA)
- एकता परिषद

राज्य सहयोगी

- **आंध्र प्रदेशः** विश्व समन्वय केंद्र (CWS), दलित बहुजन श्रमिक संघ (DBSU), वाटरशेड समर्थन सेवाएँ एवं गतिविधि नेटवर्क (WASSAN), दलित अध्ययन केंद्र; CRSD (अनंतपुर); नरेंद्र बाबू (TISS); नरसिम्हा रेड्डी (ई नाडू)
- **बिहारः** विद्यासागर सामाजिक सुरक्षा सेवा एवं शोध संस्थान (VSSSESS), बिहार स्वयंसेवी स्वास्थ्य संगठन (BVHA), बिहार आदिवासी अधिकार फोरम, दलित समन्वय (बिहार), पूर्वी एवं पश्चिमी शैक्षिक समिति
- **छत्तीसगढ़ः** मायाराम सृजन फाउंडेशन (MSF), समर्थन, छत्तीसगढ़ एक्शन रिसर्च टीम, ग्रामीण युवा अभिक्रम
- **गुजरातः** पर्यावरण मित्र, जनविकास, उन्नति, सामाजिक न्याय केंद्र, ANHAD, PUCL, गुजरात विद्यपीठ
- **हिमाचल प्रदेशः** पिपुल्स कैंपेन फॉर सोशियो–इकोनामिक इक्विटी इन द हिमालयाज (PCFSEEIH), हिमालय बचाओ समिति, हिमाचल प्रदेशन इलेक्शन वाच, जनजातीय दलित संघ
- **झारखंडः** SAFDAR, जीवन शिक्षा एवं विकास समर्थन (LEADS), आदिवासी संघमम, स्वराज फाउंडेशन, MAA
- **कर्नाटकः** शहरी अनुसंधान केंद्र, बाल अधिकार ट्रस्ट, दक्षिण भारतीय मानवाधिकार एवं शिक्षा एवं निगरानी इकाई (SICHREM), भ्रष्टाचाररोधी फोरम (ACF), भारत पुनरुद्धार आंदोलन (RIM), समुदायिक विकास फाउंडेशन (CDF), बजट एवं नीति अध्ययन केंद्र (CBPS)
- **केरलः** संचार एवं विकास अध्ययन केंद्र (CCDS), केरल शास्त्र साहित्य परिषद,

विकास अध्ययन केंद्र (CDS), सूचना भारतीय प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन संस्थान (IIMT)

- **मध्य प्रदेशः** समर्थन– विकास समर्थन केंद्र, MADHYAVAN, विकास संवाद, जन साहस, समावेश
- **महाराष्ट्रः** यूथ फॉर वालुंट्री एक्शन (YUVA), विकास सहयोग प्रतिष्ठान (VSP)
- **ओडिशाः** युवा एवं सामाजिक विकास केंद्र (CYSD), मानव विकास फाउंडेशन, युवा विकास फाउंडेशन, क्षेत्रीय विकास सहयोग केंद्र (RCDC)
- **राजस्थानः** सामुदायिक आर्थिक व्यवस्था एवं विकास सलाहकार समिति केंद्र (CECOEDECON), साझा मंच, दलित अधिकार केंद्र (CDR), ग्राम चेतना केंद्र
- **तमिलनाडुः** तमिलनाडु सोशल वाच (TNSW), नीति अध्ययन केंद्र (CPS), गांधीग्राम ग्रामीण विश्वविद्यालय, पीपुल्स फोरम फॉर सोशल डेवलपमेंट (TNPFSD)
- **उत्तर प्रदेशः** उत्तर प्रदेश वालुंट्री एक्शन नेटवर्क (UPVAN), सहभागी शिक्षण केंद्र, PAANI, दिशा सामाजिक संस्थान
- **पश्चिम बंगालः** इंस्टीट्यूट फॉर मोटिवेटिंग सेल्फ एम्प्लायमेंट (IMSE), फोरम ऑफ वालुंट्री आर्गनाइजेशन (FOVOWB), सोशियो–लीगल एड रिसर्च एंड ट्रेनिंग सेंटर, FIAN, पीपुल्स एक्शन नेटवर्क फॉर नेशनल इंटीग्रेशन एंड कम्यूनल हार्मोनी, राइट टू इन्फारमेशन नेटवर्क।

यह खुशी की बात है कि सामान्य लोग, विशेष रूप से युवा शासन प्रणाली तथा विकास के मामलों में सक्रिय रुचि लेने लगे हैं। हाल के चुनावों में मतों के प्रतिशत में वृद्धि और विविध विरोध आंदोलनों में बड़ी संख्या में लोगों की सहज भागीदारी; सामाजिक मीडिया में बहुत ज्यादा संख्या में सक्रिया पोस्टिंग, जनहित याचिकाओं की बड़ी संख्या आदि सामान्य लोगों की शासन प्रणाली एवं विकास में बढ़ती रुचि के संकेत हैं। भारतीय राजनीतिक परिदृश्य के लिए अनोखी पुस्तक 'शासन प्रणाली एवं विकास पर नागरिकों की रिपोर्ट' को व्यक्तिगत नागरिकों के लिए शासी संस्थानों को ज्यादा जवाबदेह बनाने हेतु श्रेष्ठ साधन में विकसित किया गया है। इस रिपोर्ट में प्रचुर जानकारी तथा विस्तृत विश्लेषण प्रदान किया जाता है जो नागरिकों को ठीक प्रकार के प्रश्न उठाने तथा अधिकारियों से इसके सही उत्तर और समाधान माँगने के लिए उपयोगी पैठ प्रदान करता है।

शासन प्रणाली की चार शीर्ष संस्थानों अर्थात विधानमंडल, कार्यपालिका, न्यायपालिका और स्थानीय शासी निकायों को कवर करते हुए इस रिपोर्ट में देश में शासन प्रणाली और विकास के प्रत्येक पहलू को कवर किया गया है। प्रत्येक वर्ष इस रिपोर्ट में व्यापक चर्चा तथा सुधारात्मक कार्यवाही के लिए शासन प्रणाली और विकास से संबंधित मामलों तथा चुनौतियों को प्रकाश में लाया जाता है। वर्ष 2013 की रिपोर्ट के कुछ मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं:

- संसदीय समितियाँ हाल ही में उजागर हुए कई घोटालों और शासी दल का चूक तथा समर्पण या भ्रष्टाचार के आरोपों से बचने के लिए समिति में अपने सदस्यों का प्रयोग करने के प्रयास के मद्देनजर दलगत राजनीति के लिए युद्धक्षेत्र बन गया है।
- प्रत्येक पाँच किसानों में से दो किसानों द्वारा की गई आत्महत्या से ढाई लाख से ज्यादा किसानों की आत्महत्या के कारण उनकी खेती में रुचि नहीं रह गई है और विशाल अतृप्त उत्पादन क्षमता के कारण भारती कृषि अनिश्चितता की स्थिति में है।
- बहुत ज्यादा विचाराधीन मामलों तथा जटिल प्रक्रियाओं के कारण न्यायपालिका की पहुँच बहुत ही कम है। हमारे पास 37 साल पुराने विचाराधीन मामले हैं। विचाराधीन मामलों की संख्या वर्ष 2004 में 2.81 करोड़ से बढ़कर वर्ष 2011 में 3.17 करोड़ हो गई।
- लगभग 2.5 लाख स्थानीय शासी निकायों के लिए वर्ष 2010–11 में ₹5,799.3 करोड़ तथा वर्ष 2011–12 में ₹9,963.9 करोड़ का आवंटन स्थानीय क्षेत्र विकास (LAD) कार्यक्रम के अंतर्गत लगभग 800 सांसदों (जेब खर्च के रूप में) को आवंटित लगभग ₹4,000 करोड़ प्रतिवर्ष की तुलना में बहुत कम दिखाई देता है।

कई विषय विशेषज्ञों तथा कार्यकर्ताओं के योगदान से रिपोर्ट में अंतःविषय दृष्टिकोण, कार्यान्वयन के साथ कार्यों और नीतियों से विकास एवं शासन प्रणाली सिद्धांतों के समन्वयन से अद्वितीय सीख प्रदान की गई है। यद्यपि भारतीय राष्ट्रीय स्तरीय संस्थाओं और अनुभवों पर फोकस होते हुए विश्लेषण और सीख कई संदर्भों जैसे राज्य, क्षेत्रीय तथा अधिकांश लोकतांत्रिक देशों में भी में उपयोगी है। यह रिपोर्ट राजनीतिक नेताओं, शीर्ष प्रशासकों, विद्वानों, पेशेवरों, अकादमीशियन, छात्रों, कार्यकर्ताओं और सामान्य लोगों के लिए ज्यादा उपयोगी है।

नेशनल सोशल वाच (NSW) एक शोध और सिफारिश संगठन है जो मुख्य शासी संस्थाओं की कार्यपद्धतियों और दक्षता, नागरिकों और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति उनकी वचनबद्धता की निगरानी करती है। नेशनल सोशल वाच गठबंधन (NSWC) के राष्ट्रीय सचिवालय के रूप में यह पूरे देश में फैली सिविल सोसायटी संस्थाओं तथा नागरिकों के एक विस्तृत नेटवर्क का संचालन करती है। यह सोशल वाच इंटरनेशनल के साथ भी मिलकर काम करती है।